वर्ष 04 अंक 02-03 माह अप्रेल-मई 2019 (संयुक्तांक) ₹30

(राष्ट्रीय हिन्दी मासिक पत्रिका)

युवक

स्थापित : सन् 1950

हिन्दी की उपेक्षा को चुनावी मुद्दा बनायें ...

06 बेरोजगारी है सबसे बड़ी चिन्ता

12 मृत्यु की मुस्कान से मांक्ष की अनूठी यात्रा

16 12 वीं के बाद क्या चुनें

18 आपकी हर प्रॉब्लम का सॉल्यूशन है एजूकेशन

युवक

वर्ष - 04, अंक - 02-03, अप्रैल-मई, 2019 (सयुक्तांक)

संस्थापक सम्पादक
स्व. श्री प्रेमदत्त पालीवाल

संरक्षक
स्वामी महेशानंद सरस्वती
आनंद कुटीर, मोतीझील
श्रीधाम वृंदावन

सलाहकार सम्पादक
डॉ. प्रणवीर चौहान

सम्पादक
डॉ. वंदना पालीवाल*

कॉन्सेप्ट एडिटर
अजय शर्मा

कार्यकारी सम्पादक
इंजी. ज्ञानेंद्र गौतम

वाइस प्रेसीडेंट
(सर्कुलेशन/एडवर्टाइजिंग)
बृजेश शर्मा

सीनियर ग्राफिक डिजायनर
रानू शर्मा

लीगल एडवाइजर
एड. विकास गौतम

विजुअलाइजर
मनोज कुमार/सौरव सिंह

युवक

ब्यूरो ऑफिस
लखनऊ **ब्रजगोपाल 'चंचल', फोन: 07669231877**
दिल्ली **विनय शर्मा, फोन: 09555220374**

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक **श्रीमती सुधारानी पालीवाल** द्वारा युवक प्रेस जॉस बंगला नं. 4, जीवनी मंडी, **आगरा 282004 (उ.प्र.)** से मुद्रित व प्रकाशित
सम्पादक- **डॉ. वंदना पालीवाल** * पीआरबी एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी,
R.N.I. No.- 2166
सब्सक्रिप्शन भारत में न्यूनतम एक वर्ष के लिए (12 अंक) शुल्क 340+60 (पोस्टल चार्ज)= **रुपये** 400
कृपया डीडी (आगरा में)
YUVAK MASIK PATRIKA के नाम देय हो।
GSTIN NO. 09AGNPP9720D1Z2
DAVP CODE-132863

उपरोक्त अंक में प्रकाशित रचनाओं के सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। पत्रिका में छपे किसी भी लेख के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित विभिन्न रचनाओं के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री/विज्ञापन आदि से संपादक/प्रकाशक/मुद्रक का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। उपरोक्त से संबंधित किसी भी प्रकार की कार्यवाही एवं पूछताछ की अवधि से तीन माह के अंदर की जा सकती है। इसके बाद किसी भी प्रकार की कार्यवाही, पूछताछ के लिए हम बाध्य नहीं हैं। प्रेषित स्पष्टीकरण प्रकाशित किया जाएगा। किसी भी प्रकार के विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र सिर्फ आगरा होगा।

संपादकीय कार्यालय

युवक (हिन्दी मासिक)
बंगला नं. 4, जीवनी मंडी,
आगरा-282004, उत्तर प्रदेश
पत्रिका से जुड़ी किसी भी प्रकार की जानकारी के लिए
सम्पर्क सूत्र **+91 9415407766**

लेख अथवा रचनाएं हमें ईमेल करें
yuvakmagazine@gmail.com

अमानवीय कृत्य
आतंकी हमला

20 श्रीलंका के आतंकी विस्फोटों से जुड़े सवाल

श्रीलंका अपनी शांति और मनोरतमा के लिये नई इबारत लिख ही रहा था कि वहां हुए सिलसिलेवार शक्तिशाली बम विस्फोटों एवं धमाकों के खौफनाक एवं त्रासद दृश्यों ने सम्पूर्ण मानवता को लहुलूहान कर दिया, आहत कर दिया और दहला दिया। कैसी उन्मादी आंधी पसरी कि 200 से अधिक लोगों का जीवन ही समाप्त कर दिया। हजारों गंभीर रूप से घायल हो गए तथा करोड़ों रुपये की सम्पत्ति नष्ट हो गई। इस प्रकार यह विस्फोटों की श्रृंखला, अमानवीय कृत्य अनेक सवाल पैदा कर रहे हैं।

विशेष
पर्व

08 गणगौर है दाम्पत्य की खुशहाली का पर्व

गणगौर राजस्थानी आन-बान-शान का प्राचीन पर्व है। हर युग में कुंआरी कन्याओं एवं नवविवाहिताओं का अपितु संपूर्ण मानवीय संवेदनाओं का गहरा संबंध इस पर्व से जुड़ा रहा है। यद्यपि इसे सांस्कृतिक उत्सव के रूप में मान्यता प्राप्त है किन्तु जीवन मूल्यों की सुरक्षा एवं वैवाहिक जीवन की सुदृढ़ता में यह एक सार्थक प्रेरणा भी बना है।

जरूर पढ़ें
हेल्थ

48 स्वस्थ जीवन की सार्थक तलाश जरूरी

विश्व स्वास्थ्य दिवस 2019 पूरे विश्व भर में 7 अप्रैल रविवार को मनाया जायेगा। सन 1948 में इसी दिन संयुक्त राष्ट्र संघ की एक अन्य सहयोगी और संबद्ध संस्था के रूप में दुनिया के 193 देशों ने मिल कर स्विट्जरलैंड के जेनेवा में विश्व स्वास्थ्य संगठन की नींव रखी थी। इसी संस्था द्वारा विश्व में मुख्यतः स्वास्थ्य मुद्दों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिये विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य दुनिया भर के लोगों के स्वास्थ्य के स्तर को ऊंचा उठाना है एवं उन्नत स्वास्थ्य की जीवनशैली निरूपित करना है।

आश्चर्यजनक
चिंतन

32 क्यों चुनावी मुद्दा नहीं बन पाती शिक्षा?

लोकसभा चुनावों का प्रचार अब तो सारे देश में जोर पकड़ चुका है। चुनावी सभाएं, रैलियां, भाषण वगैरह हो रहे हैं। पहले चरण का चुनाव तो मंगलवार को थम भी जायेगा। हर पक्ष दूसरे पर जनता को छलने और गुमराह करने के आरोप लगा रहे हैं। ये अपनी तरफ से सत्तासीन होने पर आसमान से सितारे तोड़ कर लाने के अलावा तमाम अन्य संभव-असंभव वादे भी कर रहे हैं। पर इन सबके बीच एक मुद्दा लगभग अछूता सा बना हुआ है।

यूथ आईकोन
इंटरव्यू

18 आपकी हर प्रॉब्लम का सॉल्युशन है एजुकेशन: भरत बंसल

अपनी मेहनत लगन और कर्तव्य निष्ठा के दम पर महज छोटी सी उम्र में स्वयं को उधोग जगत का ध्रुवतारा साबित कर चुके 14 मार्च 1996 को जन्मे भरत बंसल की सोच और उनका व्यक्तित्व उन्हें असधारण शख्सियत बनाती है। भारत कहते हैं जीवन की विषम परिस्थितियां आपको बहुत कुछ सिखाती हैं जितनी कठिन परिस्थितियों से आप गुजरते हैं उतने ही मजबूत और सक्षम बनकर उभरते हैं...

44 पिंजरे वाली मुनिया (कहानी)
50 कविता

सितारों की राजनीति

लोकसभा चुनाव में गैर-राजनीतिक सिलेब्रिटीज को सीधे चुनाव में उतार देना भारतीय राजनीति का एक ट्रेंड बन गया है। इस बार शुरू में यह थोड़ा कमजोर पड़ता लगा लेकिन समय बीतने के साथ 2019 के चुनाव में इससे जुड़े सारे रेकॉर्ड टूटते नजर आ रहे हैं। आधा चुनाव निकल जाने के बाद भी खेल और फिल्मों से सितारों को टिकट दिए जाने का सिलसिला जारी है। लगता है, राजनीतिक दलों में इतना आत्मविश्वास नहीं है कि वे अपने योग्य, समर्पित लेकिन कम चर्चित नेताओं-कार्यकताओं पर दांव लगा सकें।

दूसरी बात यह कि हमारा देश नायकत्व मोह से नहीं उभर पाया है। जनता इतनी परिपक्व नहीं हुई है कि अनजान चेहरों को सिर्फ उनके गुणों या कामकाज के आधार पर चुन ले। अमेरिका में चुनावी प्रक्रिया इतनी लंबी होती है कि एकदम अनाम-सा उम्मीदवार भी वोट पड़ने तक अपनी अलग पहचान बना लेता है।

लेकिन भारत में अक्सर लोग उम्मीदवार की शक्ल पहचाने बगैर ही वोट डाल आते हैं। इसीलिए राजनीतिक पार्टियां खासकर उन क्षेत्रों में, जहां उन्हें अपना पिछला प्रत्याशी बदलना होता है, ऐसा कैंडिडेट खड़ा करना चाहती हैं जिसका नाम लोगों को पता हो, भले ही उसका वास्ता कभी राजनीति के 'र' से भी न रहा हो। कारण यह कि लोग उनका नाम पहले से जान रहे होते हैं। बीजेपी ने बॉलिवुड एक्टर सनी देओल को पंजाब की गुरदासपुर सीट से मैदान में उतारा है जबकि मशहूर गायक हंसराज हंस को उत्तर-पश्चिमी दिल्ली से और क्रिकेटर गौतम गंभीर को पूर्वी दिल्ली से टिकट दिया है। इसके अलावा भोजपुरी फिल्मों के एक स्टार रवि किशन को उसने यूपी के गोरखपुर से और दूसरे स्टार दिनेश लाल यादव उर्फ निरहुआ को बगल में आजमगढ़ से पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव के मुकाबले खड़ा किया है। उधर कांग्रेस के टिकट पर ओलिंपिक पदक विजेता बॉक्सर विजेंद्र सिंह दक्षिणी दिल्ली से और बॉलिवुड एक्ट्रेस उर्मिला मातोंडकर उत्तरी मुंबई से अपनी किस्मत आजमा रही हैं। क्षेत्रीय दलों में टीएमसी ने एक्ट्रेस और मॉडल नुसरत जहां और मिमी चक्रवर्ती को चुनाव लड़ने का मौका दिया है। दमदार एक्टर प्रकाश राज कर्नाटक की बेंगलुरु सेंट्रल लोकसभा सीट से निर्दलीय चुनाव लड़ रहे हैं। राजनीति में अब वही सितारे आ रहे हैं, जो अपने क्षेत्र में ढलान पर होते हैं। सनी देओल से लेकर उर्मिला मातोंडकर, गौतम गंभीर और विजेंद्र तक का हाल ऐसा ही है। जाहिर है, राजनीति इनके लिए करियर की दूसरी पारी जैसी है, जहां इन्हें एंट्री बड़ी आसानी से मिल जाती है। लेकिन हाल में जितने भी सितारे संसद पहुंचे, बतौर सांसद उनके प्रदर्शन में ऐसा कुछ भी नहीं दिखा, जिससे नए सितारों के राजनीति में आने से कोई उम्मीद पैदा होती हो। कुल मिलाकर इनकी भूमिका चुनाव में किसी पार्टी को थोड़ा और कवरेज दिलाने तक ही सीमित रहती है। ■

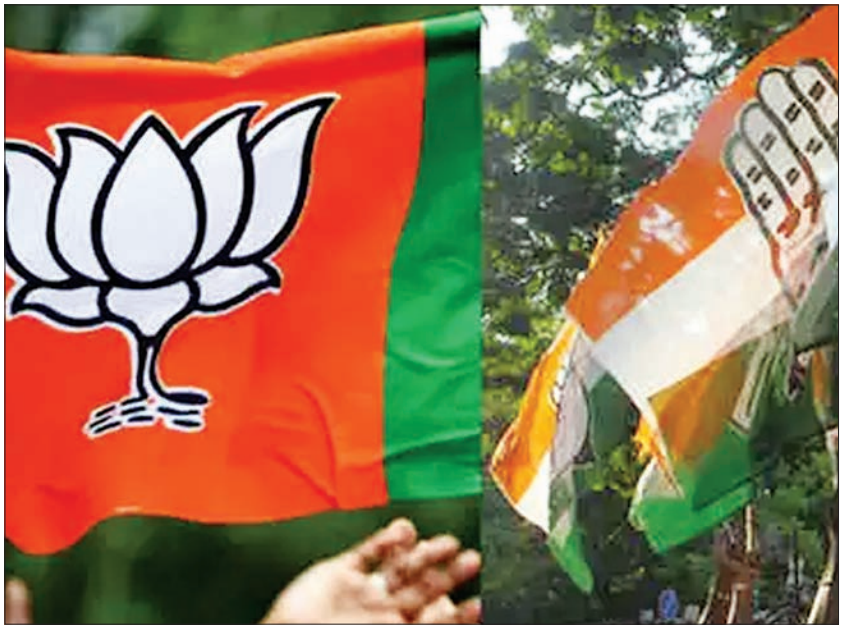

भारत में अक्सर लोग उम्मीदवार की शक्ल पहचाने बगैर ही वोट डाल आते हैं। इसीलिए राजनीतिक पार्टियां खासकर उन क्षेत्रों में, जहां उन्हें अपना पिछला प्रत्याशी बदलना होता है, ऐसा कैंडिडेट खड़ा करना चाहती हैं जिसका नाम लोगों को पता हो, भले ही उसका वास्ता कभी राजनीति के ह्यरह्न से भी न रहा हो।

डॉ. वंदना पालीवाल

बेरोजगारी है सबसे बड़ी चिन्ता

दुनिया भर के शासक एवं सत्ताएं अपनी उपलब्धियों का चाहे जितना बखान करें, सच यह है कि आम आदमी की मुसीबतें एवं तकलीफें कम होने का नाम नहीं ले रही हैं। इसके बजाय रोज नई-नई समस्याएं उसके सामने खड़ी होती जा रही हैं, जीवन एक जटिल पहेली बनता जा रहा है। विकसित एवं विकासशील देशों में महंगाई बढ़ती है, मुद्रास्फीति बढ़ती है, यह अर्थशास्त्रियों की मान्यता है। पर बेरोजगारी क्यों बढ़ती है? एक और प्रश्न आम आदमी के दिमाग को झकझोरता है कि तब फिर विकास से कौन-सी समस्या घटती है?

विवेक पाठक

बहुराष्ट्रीय मार्केट रिसर्च कंपनी इप्सॉस के द्वारा इसी माह कराया गया सर्वेक्षण वॉट वरीज दि वर्ल्ड ग्लोबल सर्वे के निष्कर्ष विभिन्न देशों की जनता की अलग-अलग चिंताओं को उजागर करता हैं। जहां तक भारत का प्रश्न है तो यहां बीते मार्च में किए गए सर्वे में ज्यादातर लोगों ने यह तो माना कि सरकार की नीतियां सही दिशा में हैं, लेकिन आतंकवाद की चिंता उन्हें सबसे ज्यादा सता रही थी। उसके बाद देश के लोग बेरोजगारी को लेकर सबसे ज्यादा परेशान पाए गए, हालांकि आर्थिक और राजनीतिक भ्रष्टाचार की चिंता भी उन्हें परेशान किए हुए है। हमारे देश में सरकारी मशीनरी एवं राजनीतिक व्यवस्थाएं सभी रोगग्रस्त हैं। वे अब तक अपने आपको सिद्धांतों और अनुशासन में ढाल नहीं सके। कारण राष्ट्र का चरित्र कभी इस प्रकार उभर नहीं सका।

इप्सॉस का ऑनलाइन सर्वे 28 देशों के 65 वर्ष से कम आयु के लोगों के बीच किया गया, जिसमें बाजार की दृष्टि से महत्वपूर्ण इन मुल्कों के औसतन 58 प्रतिशत नागरिकों ने माना है कि उनका देश नीतियों के मामले में भटक-सा गया है। ऐसा सोचने वालों में सबसे ज्यादा दक्षिण अफ्रीका, स्पेन, फ्रांस, तुर्की और बेल्जियम के लोग हैं। आर्थिक और राजनीतिक भ्रष्टाचार, गरीबी और सामाजिक असमानता ज्यादातर मुल्कों में बड़े मुद्दे हैं। बेरोजगारी, अपराध, हिंसा और स्वास्थ्य संबंधी चिंता इनके बाद ही आती है। अपनी सरकार में सबसे ज्यादा विश्वास चीन के लोगों का है। वहां दस में नौ लोग अपनी सरकारी नीतियों की दिशा सही मानते हैं। यह इस नियमित सर्वेक्षण पर तात्कालिक घटनाओं का काफी असर रहता है। जैसे भारत में इस बार का सर्वे पुलवामा हमले के बाद किया गया तो इस पर उस हादसे की छाया थी लेकिन देश के पिछले सर्वेक्षणों को देखें तो आतंकवाद का स्थान यहां की चिंताओं में नीचे रहा है और बेरोजगारी सबसे बड़ी समस्या के तौर पर देखी जाती रही है। रोजगार की फिक्र भारत में सबसे ऊपर होने की पुष्टि अन्य सर्वेक्षणों से भी हुई है। लेकिन सत्रहवीं लोकसभा के लिए जारी चुनाव अभियान में बेरोजागारी के ज्वलंत मुद्दे की उपस्थिति और उस पर कुछ मंथन होता और नतीजे में शायद आगामी चुनी जाने वाली सरकार से रोजगार की कोई तजबीज भी होते हुए दिख पाती। विकास की वर्तमान अवधारणा और उसके चलते फैलती बेरोजगारी को राजनेताओं ने लगभग भूला-सा दिया है, लेकिन ये ही ऐसे मसले हैं जिनके जवाब से कई संकटों से निजात पाई जा सकती है।

प्रश्न यह भी है कि क्या भारतीय जनता राजनीतिक दलों एवं नेताओं पर मुहर लगाने की बजाय इस तरह के बुनियादी मुद्दों पर कोई कठोर निर्णय लेगी? हर बार वह अपने मतों से पूरा पक्ष बदल देती है। कभी इस दल को, कभी उस दल को, कभी इस विचारधारा को, कभी उस विचारधारा को। लेकिन अपने जीवन से जुड़े बुनियादी मुद्दों को तवज्जों क्यों नहीं देती? मैं जहां तक अनुभव करता हूँ भारतीय जनता की यह सबसे बड़ी कमजोरी रही है। शेक्सपीयर ने कहा था- दुर्बलता! तेरा नाम स्त्री है। पर आज अगर शेक्सपीयर होता तो इस परिप्रेक्ष्य में, कहता दुर्बलता! तेरा नाम भारतीय जनता है। आदर्श सदैव ऊपर से आते हैं। पर शीर्ष पर आज इसका अभाव है। वहां मूल्य बन ही नहीं रहे हैं, फलस्वरूप नीचे तक, साधारण से साधारण संस्थाएं, संगठनों और मंचों तक राजनीतिक स्वार्थ सिद्धि और नफा-नुकसान छाया हुआ है। सोच का मापदण्ड मूल्यों से हटकर राजनीतिक निजी हितों पर ठहर गया है। राष्ट्रीय चरित्र निर्माण की कहीं कोई आवाज उठती भी है तो ऐसा लगने लगता है कि यह विजातीय तत्व है जो हमारे जीवन में घुस रहा है। पिछले ही महीने प्यू रिसर्च सेंटर की रिपोर्ट में 76 प्रतिशत वयस्कों ने बेरोजगारी को बहुत बड़ी समस्या बताया था। दरअसल भारत में सरकार का आकलन कई मुद्दों को लेकर किया जा रहा है, लिहाजा ज्यादातर लोगों का भरोसा उसकी नीतियों पर बना हुआ है। लेकिन इस बात पर प्रायः आम सहमति है कि वह रोजगार के मोर्चे पर वह विफल रही है। एक तबका एनएसएसओ के हवाले से कहता है कि 2017-18 में बेरोजगारी की दर 6.1 प्रतिशत तक पहुंच गई जो पिछले 45 साल का सर्वोच्च स्तर है। लेकिन इस आंकड़े को सरकार नहीं मानती। जो भी हो, पर इप्सॉस सर्वे में सरकार के लिए यह संदेश छुपा है कि वह सुरक्षा को लेकर तैयारी पुख्ता रखे, लेकिन लोगों की रोजी-रोजगार से जुड़ी मुश्किलों की भी अनदेखी न करे। निर्धनता दूर करने का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि सभी के लिए संतोषजनक रोजगार उपलब्ध हो तथा रोजगारों से जुड़ी विभिन्न विषमताओं को कम किया जाए। इस संदर्भ में यदि भारत की स्थिति को देखा जाए तो हमारे देश में रोजगार से जुड़ी विषमताएं अनेक स्तर पर मौजूद हैं व उन्हें दूर करने के की दिशा में अभी बहुत कुछ करना शेष हैं। इनमें से अनेक विषमताओं की ओर हाल ही में जारी की गई वैश्विक एनजीओ ह्यआक्सफैम-इंडियाह्ल की रिपोर्ट विषमताओं पर ध्यान देते हुए भारत में रोजगार की स्थिति को प्रमुखता से उभारा है। ह्यस्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया-2018ह्ल के अनुसार भारत में 82 प्रतिशत पुरुषों और 92 प्रतिशत महिलाओं की मासिक आय 10,000 रुपये प्रतिमाह से कम है जो एक बहुत चिंताजनक स्थिति है। सातवें वेतन आयोग ने तय किया था कि न्यूनतम मासिक आय 18,000 रुपये होनी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए कृषि सबसे बड़ा रोजगार बना हुआ है, पर इस क्षेत्र में भी रोजगार के अवसर कम हो रहे हैं। अनेक दलित महिला मजदूरों की स्थिति बंधुआ मजदूरों जैसी है। शहरी क्षेत्रों में घरेलू-कर्मियों में 81 प्रतिशत महिलाएं व तंबाकू-बीड़ी के कार्य में 77 प्रतिशत महिलाएं हैं। इन दोनों कार्यक्षेत्रों में स्थितियां कई स्तरों पर अन्यायपूर्ण हैं। ह्यआक्सफैमह्ल की इस रिपोर्ट के अनुसार भारत में बेरोजगारी एक बड़ा संकट है। इस संकट का उचित समय पर समाधान न हुआ तो इसका समाज की स्थिरता और शांति पर प्रतिकूल असर पड़ेगा। एक और जो दसियों लाख युवा श्रम-शक्ति में प्रतिवर्ष आ रहे हैं उनके लिए पर्याप्त रोजगार नहीं हैं, दूसरी ओर इन रोजगारों की गुणवत्ता व वेतन अपेक्षा से कहीं कम हैं। लिंग, जाति व धर्म आधारित भेदभावों के कारण भी अनेक युवाओं को रोजगार प्राप्त होने में अतिरिक्त समस्याएं हैं। इस स्थिति से परेशान युवा एक समय के बाद रोजगार की तलाश छोड़ देते हैं। इन कारणों से सरकार द्वारा रोजगार प्राप्ति की सुविधाजनक परिभाषा के बावजूद बेरोजगारी के आंकड़ें चिंताजनक हो रहे हैं व यह प्रवृत्ति आगे और बढ़ सकती है। इस चिंताजनक स्थिति को सुधारने के लिए इस रिपोर्ट ने व्यापक स्तर पर सुधार के सुझाव दिये गये हैं। स्वास्थ्य व शिक्षा में अधिक निवेश से उत्पादकता में सुधार होगा। यह दो क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें भविष्य में बहुत रोजगार सृजन भी हो सकता है। कुशलता बढ़ाने पर बेहतर ध्यान देना चाहिए ताकि अंतर्राष्ट्रीय स्पर्धा में टिक सकें। सरकार को भ्रष्टाचार दूर करना चाहिए। कर-नीतियों में विषमता की दर कम होनी चाहिए। कारपोरेट टैक्स में छूट देने का अतिरिक्त उत्साह उचित नहीं है। इस तरह जो अतिरिक्त राजस्व प्राप्त हो उसका उपयोग शिक्षा, स्वास्थ्य व सामाजिक सुरक्षा सुधारने के लिए करना चाहिए। क्या देश मुट्ठीभर राजनीतिज्ञों और पूंजीपतियों की बपौती बनकर रह गया है? चुनाव प्रचार करने हैलीकॉप्टर से जाएंगे पर उनकी जिंदगी संवारने के लिए कुछ नहीं करेंगे। तब उनके पास बजट की कमी रहती है। लोकतंत्र के मुखपृष्ठ पर ऐसे बहुत धब्बे हैं, अंधेरे हैं, वहां मुखौटे हैं, गलत तत्त्व हैं, खुला आकाश नहीं है। मानो प्रजातंत्र न होकर सजातंत्र हो गया। क्या इसी तरह नया भारत निर्मित होगा? राजनीति सोच एवं व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन हो ताकि अब कोई गरीब नमक और रोटी के लिए आत्महत्या नहीं करें। ■

लोकतंत्र के मुखपृष्ठ पर ऐसे बहुत धब्बे हैं, अंधेरे हैं, वहां मुखौटे हैं, गलत तत्त्व हैं, खुला आकाश नहीं है। मानो प्रजातंत्र न होकर सजातंत्र हो गया। क्या इसी तरह नया भारत निर्मित होगा? राजनीति सोच एवं व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन हो ताकि अब कोई गरीब नमक और रोटी के लिए आत्महत्या नहीं करें।

गणगौर- 8 अप्रैल 2019 पर विशेष

गणगौर
है दाम्पत्य की खुशहाली का पर्व

गणगौर राजस्थानी आन-बान-शान का प्राचीन पर्व हैं। हर युग में कुंआरी कन्याओं एवं नवविवाहिताओं का अपितु संपूर्ण मानवीय संवेदनाओं का गहरा संबंध इस पर्व से जुड़ा रहा है। यद्यपि इसे सांस्कृतिक उत्सव के रूप में मान्यता प्राप्त है किन्तु जीवन मूल्यों की सुरक्षा एवं वैवाहिक जीवन की सुदृढ़ता में यह एक सार्थक प्रेरणा भी बना है। यह पर्व सांस्कृतिक, पारिवारिक एवं धार्मिक चेतना की ज्योति किरण है। इससे हमारी पारिवारिक चेतना जाग्रत होती है, जीवन एवं जगत में प्रसन्नता, गति, संगति, सौहार्द, ऊर्जा, आत्मशुद्धि एवं नवप्रेरणा का प्रकाश परिव्याप्त होता है। यह पर्व जीवन के श्रेष्ठ एवं मंगलकारी व्रतों, संकल्पों तथा विचारों को अपनाने की प्रेरणा देता है।

बेला गर्ग

गणगौर शब्द का गौरव अंतहीन पवित्र दाम्पत्य जीवन की खुशहाली से जुड़ा है। कुंआरी कन्याएं अच्छा पति पाने के लिए और नवविवाहिताएं अखंड सौभाग्य की कामना के लिए यह त्यौहार हर्षोल्लास के साथ मनाती हैं, व्रत करती हैं, सज-धज कर सोलह शृंगार के साथ गणगौर की पूजा की शुरूआत करती है। पति और पत्नी के रिश्तें को यह फौलादी सी मजबूती देने वाला त्यौहार है, वहीं कुंआरी कन्याओं के लिए आदर्श वर की इच्छा पूरी करने का मनोकामना पर्व है। यह पर्व आदर्शों की ऊंची मीनार है, सांस्कृतिक परम्पराओं की अद्वितीय कड़ी है एवं रीति-रिवाजों का मान है।

गणगौर का त्यौहार होली के दूसरे दिन से ही आरंभ हो जाता है जो पूरे अठारह दिन तक लगातार चलता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा से कुंआरी कन्याएं और नवविवाहिताएं प्रतिदिन गणगौर पूजती हैं, वे चैत्र शुक्ला द्वितीया (सिंजारे) के दिन किसी नदी, तालाब या सरोवर पर जाकर अपनी पूजी हुई गणगौरों को पानी पिलाती हैं और दूसरे दिन सायंकाल के समय उनका विसर्जन कर देती हैं।

अठारह दिनों तक चलने वाले इस त्यौहार में होली की राख से सोलह पीण्डियां बनाकर पाटे पर स्थापित कर आस-पास ज्वारे बोए जाते हैं। ईसर अर्थात शिव रूप में गण और गौर रूप में पार्वती को स्थापित कर उनकी पूजा की जाती है। मिट्टी से बने कलात्मक रंग-रंगीले ईसर गण-गौर झुले में झुलाए जाते हैं। सायंकाल बींद-बींनणी बनकर बागों में या मोहल्लों में रंग-बिरंगे परिधान, आभूषणों में किशोरियां और नवविवाहिताएं आमोद-प्रमोद के साथ घूमर नृत्य करती हैं, आरतियां गाती हैं, गौर पूजन के गीत गाकर खुश होती हैं। जल, रोली, मौली, काजल, मेहंदी, बिंदी, फूल, पत्ते, दूध, पाठे, हाथों में लेकर वे कामना करती हैं कि हम भाई को लड्डू देंगे, भाई हमें चुनरी देगा, हम गौर को चुनरी धारण करायेंगे, गौर हमें मनमाफिक सौभाग्य देगी।

गणगौर त्यौहार विशेषतः पश्चिम भारत खासतौर से राजस्थान, गुजरात, निमाड़-मालवा में मनाया जाता है। इस पर्व को मनाने के अलग-अलग जगह के अलग-अलग तरीके हैं। कन्याएं कलश को सिर पर रखकर घर से निकलती हैं तथा किसी मनोहर स्थान पर उन कलशों को रखकर इर्द-गिर्द घूमर लेती हैं। जोधपुर में लोटियों का मेला लगता है। वस्त्र और आभूषणों से सजी-धजी, कलापूर्ण लोटियों की मीनार को सिर पर रखे, हजारों की संख्या में गाती हुई नारियों के स्वर से जोधपुर का पूरा बाजार गूंज उठता है। नाथद्वारा में सात दिन तक लगातार सवारी

निकलती है। सवारी में भाग लेने वाले व्यक्तियों की पोशाक भी उस रंग की होती है जिस रंग की गणगौर की पोशाक होती है। सात दिन तक अलग-अलग रंग

नाचना और गाना तो इस त्यौहार का मुख्य अंग है ही। घरों के आंगन में, सालेड़ा आदि नाच की धूम मची रहती है। परदेश गए हुए इस त्यौहार पर घर लौट आते हैं। जो नहीं आते हैं उनकी बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा की जाती है। आशा रहती है कि गणगौर की रात को जरूर आयेंगे। झुंझलाहट, आह्लाद और आशा भरी प्रतीक्षा की मीठी पीड़ा को व्यक्त करने का साधन नारी के पास केवल उनके गीत हैं। ये गीत उनकी मानसिक दशा के बोलते चित्र हैं।

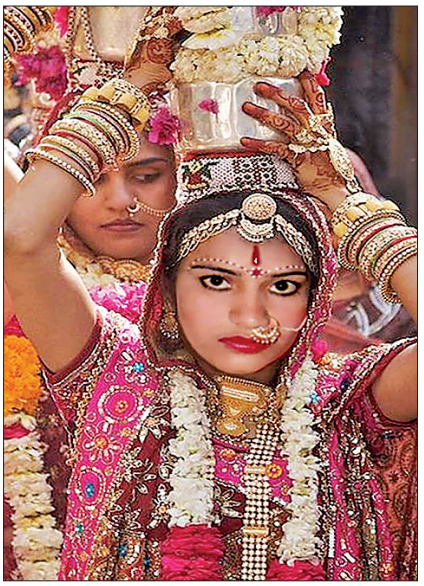

की पोशाक पहनी जाती हैं। आम जनता के वस्त्र गणगौर के अवसर पर निःशुल्क रंगे जाते हैं। उदयपुर में गणगौर की नाव प्रसिद्ध है। जयपुर में त्रिपोलिया गेट से आज भी राजशाही तरीके से गणगौर की सवारी अतीत की परम्परा को जीवंत करती है। इस प्रकार पूरे राजस्थान में गणगौर उत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है।

नाचना और गाना तो इस त्यौहार का मुख्य अंग है ही। घरों के आंगन में, सालेड़ा आदि नाच की धूम मची रहती है। परदेश गए हुए इस त्यौहार पर घर लौट आते हैं। जो नहीं आते हैं उनकी बड़ी आतुरता से प्रतीक्षा की जाती है। आशा रहती है कि गणगौर की रात को जरूर आयेंगे। झुंझलाहट, आह्लाद और आशा भरी प्रतीक्षा की मीठी पीड़ा को व्यक्त करने का साधन नारी के पास केवल उनके गीत हैं। ये गीत उनकी मानसिक दशा के बोलते चित्र हैं।

भौतिक एवं भोगवादी भागदौड़ की दुनिया में गणगौर का पर्व दुःखों को दूर करने एवं सुखों का सृजन करने का प्रेरक है। यह पर्व दाम्पत्य जीवन के दायित्वबोध की चेतना का संदेश हैं। इसमें नारी की अनगिनत जिम्मेदारियों के सूत्र गुम्फित होते हैं। यह पर्व उन चैराहों पर पहरा देता है जहां से जीवन आदर्शों के भटकाव की संभावनाएं हैं, यह उन आकांक्षाओं को थामता है जिनकी गति तो बहुत तेज होती है पर जो बिना उद्देश्य बेतहाशा दौड़ती है। यह पर्व नारी को शक्तिशाली और संस्कारी बनाने का अनूठा माध्यम है। वैयक्तिक स्वार्थों को एक ओर रखकर औरों को सुख बांटने और दुःख बटोरने की मनोवृत्ति का संदेश है। गणगौर संपूर्ण मानवीय संवेदनाओं को प्रेम और एकता में बांधने का निष्ठासूत्र है। इसलिए गणगौर का मूल्य केवल नारी तक सीमित न होकर सम्पूर्ण मानव के मनों तक पहुंचे, तभी इस पर्व को मनाने की सार्थकता है। ■

कलात्मक मृत्यु का इतिहास रचने वाला साधक

जैन धर्म के छोटे-से आम्नाय तेरापंथ धर्मसंघ के सुश्रावक श्री विष्णुभगवान जैन का इन दिनों अलखपुरा तहसील तोशाम जिला भिवानी (हरियाणा) में संथारा यानी समाधिमरण का आध्यात्मिक अनुष्ठान असंख्य लोगों के लिये कोतुहल का विषय बना हुआ है। दिनांक 9 नवम्बर, 2018 भैयादूज के प्रारंभ यह सर्वाधिक लम्बा संथारा आज 146 वें दिवस पर भी अनवरत जारी है। मृत्यु के इस महामहोत्सव के साक्षात्कार के लिये असंख्य श्रद्धालुजन देश के विभिन्न भागों से दर्शनार्थ पहुंच कर अमरत्व की इस अनूठी एवं विलक्षण यात्रा से लाभान्वित हो रहे हैं। यह संथारा इसलिये भी अनूठा एवं आश्चर्यकारी है क्योंकि एक कृषिजीवी जाट परिवार में जन्मे एवं सनातन धर्म के संस्कारों में पले एवं बाद में जैन बने श्री विष्णु भगवान आज के इस भौतिकवादी एवं सुविधावादी युग में सुख-सुविधा, मोहमाया के त्याग का इतिहास रच रहे हैं।

विनय शर्मा

जैसाकि सर्वविदित है कि जैन धर्म में अनगिनत सदियों से संथारे की परम्परा चली आ रही है और वर्तमान में भी समाधिमरण की यह अनूठी परम्परा पूरी तरह से जीवित और जीवन्त बनी हुई है। जैन धर्म के नियमानुसार ली जाने वाले संथारा व संलेखना समाधि की गौरवमयी आध्यात्मिक परम्परा है, जिसे धुंधलाने के प्रयास होते रहे हैं और इसे कानूनी मसला भी बनाया जाता रहा है। लोगों में सहज जिज्ञासा है कि संथारा आखिर क्या है? जैन धर्म के मृत्यु महोत्सव एवं कलात्मक मृत्यु को समझना न केवल जैन धर्मावलम्बियों के लिये बल्कि आम जनता के लिये उपयोगी है। यह मृत्यु की अनूठी आध्यात्मिक प्रक्रिया है, जिसके उज्ज्वल इतिहास एवं महत्व को समझते हुए भूदान आन्दोलन के प्रणेता आचार्य विनोबा भावे ने भी अपनाया था। संत विनोबा भावे ने कहा था कि गीता को छोड़कर और महावीर से बढ़कर इस संसार में कोई नहीं है। यह बात मैं गर्व से नहीं, बल्कि स्वाभिमान से कह सकता हूं। विनोबा भावे ने जैन संतों का भी अनुकरण किया है। उन्होंने जैन परम्परा में मृत्यु की कला को भी आत्मसात करते हुए संलेखना-संथारा को स्वीकार कर मृत्यु का वरण किया। संलेखना के दौरान वर्धा में गांधी आश्रम में भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने उनसे कहा था कि देश को उनकी जरूरत है। उन्हें आहार नहीं छोड़ना चाहिए। तो संत विनोबा भावे ने कहा था कि मेरे और परमात्मा के बीच में अब किसी को नहीं आना है, क्योंकि अब मेरी यात्रा पूर्ण हो रही है। न केवल विनोबा भावे बल्कि अनेक जैनेत्तर लोगों ने भी समाधिपूर्वक मृत्यु का वरण करके संथारे को गौरवान्वित किया है। श्री विष्णु भगवान जैन ने अपनी मृत्यु को इसी प्रकार धन्य करते हुए अमरत्व की ओर गतिमान है।

आत्मविश्वासी, दृढ़निश्चयी, कर्मयोगी एवं सुश्रावक श्री विष्णु भगवान जैन ने 57 वर्ष की आयु में अपने जीवन ही नहीं, बल्कि अपनी मृत्यु को भी सार्थक करने के लिये संथारा की कामना की, उनकी उत्कृष्ट भावना को देखते हुए आचार्य श्री महाश्रमण ने इसकी स्वीकृति प्रदत्त की और उनकी शिष्या साध्वी यशोधराजी ने अलखपुरा गांव पधारकर उन्हें संथारा दिला दिया गया। श्री विष्णु भगवान जैन आचार्य महाप्रज्ञ से गुरुधारणा स्वीकार की और एक आदर्श श्रावक की जीवनचर्या को जीने लगे। उनका सम्पूर्ण जीवन भगवान महावीर के आदर्शों एवं तेरापंथ धर्मसंघ के संस्कारों पर गतिमान रहा है। जिन्होंने अपने त्याग, तपस्या, गुरु निष्ठा एवं संघ निष्ठा के उपक्रमों से एक नया इतिहास बनाया है। उन्होंने सारी सुख-सुविधाएं और भरे पूरे परिवार की मोहमाया को छोड़कर देहाध्यास से ऊपर उठकर सदा के लिए खाने को त्याग दिया। एक अजैनी होकर उन्होंने जो इतिहास रचा है वह सचमुच विरल है, अनूठा है, आश्चर्यकारी है, अद्भुत है। चैधरीजी की दृढ़ता एवं संकल्पनिष्ठा देखकर लोग दांतों तले अंगुली दबा रहे हैं और यह स्वर चारों ओर गुंजायमान है कि वाह! पीढ़ियों के जैनी भी इनके सामने क्या मायने रखते हैं। विष्णु भगवान जी ने मृत्यु के मोर्चे पर खड़े होकर श्रावक के सर्वोच्च मनोरथ संथारे को अपनाकर मृत्यु को चुनौती दी है। पूर्ण स्वस्थता और संपन्नता की स्थिति में इस तरह भौतिकवादी युग में चिंतनपूर्वक एवं स्वेच्छा से संथारा स्वीकार करना एक वीर महापुरुष का ही कर्म हो सकता है। इस मायने में विष्णु भगवान जी ने जो विलक्षण इतिहास रचा है, मृत्यु को जो महोत्सव का रूप दिया है वह अनुकरणीय है। उन्होंने अपने इस विलक्षण निर्णय से न केवल जैन समाज बल्कि सम्पूर्ण अध्यात्म-जगत में सुनाम अर्जित किया है। ऐसे महान साधक, तपस्वी एवं कर्मयौद्धा श्रावक का संथारा एक नया इतिहास निर्मित कर रहा है।

जैन धर्म-दर्शन-शास्त्रों के विद्वानों का मानना है कि आज के दौर की तरह वेंटिलेटर पर दुनिया से दूर रहकर और मुंह मोड़कर मौत का इंतजार करने से बेहतर है संथारा प्रथा। यहाँ धैर्यपूर्वक अंतिम समय तक जीवन को पूरे आदर और समझदारी के साथ जीने की कला को आत्मसात किया जाता है। श्री विष्णु भगवान जैन का संथारा निश्चित ही सम्पूर्ण मानवता के कल्याण का निमित्त बनेगा एवं उन्हें भी अमरत्व प्राप्त होगा, यही विश्वास है।

श्रमण संस्कृति की अति प्राचीन और अहम धारा जैन धर्म की परम्परा में संलेखना और संथारा को सदैव बहुत उच्च साहसिक त्याग का प्रतीक माना गया है। जैन समाज में यह पुरानी प्रथा है कि जब किसी तपस्वी व्यक्ति को लगता है कि वह मृत्यु के द्वार पर खड़ा है तो वह स्वयं अन्न-जल त्याग देता है। जैन शास्त्रों में इस तरह की मृत्यु को संथारा कहा जाता है। इसे जीवन की अंतिम साधना के रूप में स्थान प्रदान किया है। अंतिम समय की आहट सुन कर सब कुछ त्यागकर मृत्यु को भी सहर्ष गले लगाने के लिए तैयार हो जाना वास्तव में बड़ी हिम्मत का काम है। जैन परम्परा में इसे वीरों का कृत्य माना जाता है। यह आत्महत्या नहीं, आत्म समाधि की मिसाल है और समाधि को जैन धर्म ही नहीं, भारतीय संस्कृति में गहन मान्यता दी गई है। मरते समय कौन नहीं चाहेगा कि मेरे मुख से प्रभु-नाम निकले? गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में एक चैपाई लिखी है, ह्यकोटि-कोटि मुनि जतन कराहिं। अन्त राम कहि आवत नाहिंह्ण बस इसी मंगल भावना का साकार रूप सल्लेखना अथवा संथारा है जिसमें अहिंसा अपनी पराकाष्ठा पर होती है और सारे व्रत अत्यन्त निर्मल हो जाते हैं। आज जबकि सर्वत्र यही देखने में आता है कि कोई भी मनुष्य मरना नहीं चाहता। ह्यसव्वे जीवा वि इच्छन्ति, जीविउे न मरिज्जिऊंह्ण जिजीविषा हर प्राणी की एक मौलिक मनोवृत्ति है। मौत का फंदा जब गले में पड़ता है तो अंतिम क्षण तक वह चाहता है कि कोई मुझे किसी भी कीमत पर बचा ले। मृत्यु को लेकर जो अज्ञान है। यदि उस अज्ञान के दुर्ग की प्राचीरों को जमींदोज कर दिया जाये तो कोई उलझन शेष नहीं रहेगी। अज्ञान भय को जन्म देता है और भय जिंदगी को नर्क बना देता है।

मनुष्य को जीवन में राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आदि विविध प्रकार के उत्सव मनाने का अवसर प्राप्त होता है। प्रत्येक उत्सव का अपनी-अपनी जगह महत्व है। उनके महत्व का कारण उनमें अनेक विशेषताएं हैं। किन्तु मृत्यु महोत्सव जीवन के अंत में एक बार ही मनाने का अवसर प्राप्त होता है। संसार में जीवों को जन्म-जरा-मृत्यु से मुक्त कराने वाला उत्सव ही सर्वोत्कृष्ट उत्सव है। इसलिए जैनाचार्यों ने मृत्यु को महोत्सव कहा है। जैन धर्म के मृत्यु महोत्सव एवं कलात्मक मृत्यु को समझना न केवल जैन धर्मावलम्बियों के लिये बल्कि आम जनता के लिये उपयोगी है। यह समझना भूल है कि संथारा लेने वाले व्यक्ति का अन्न-जल जानबूझकर या जबरदस्ती बंद करा दिया जाता है। संथारा स्व-प्रेरणा से लिया गया निर्णय है। जैन धर्म-दर्शन-शास्त्रों के विद्वानों का मानना है कि आज के दौर की तरह वेंटिलेटर पर दुनिया से दूर रहकर और मुंह मोड़कर मौत का इंतजार करने से बेहतर है संथारा प्रथा। यहाँ धैर्यपूर्वक अंतिम समय तक जीवन को पूरे आदर और समझदारी के साथ जीने की कला को आत्मसात किया जाता है। श्री विष्णु भगवान जैन का संथारा निश्चित ही सम्पूर्ण मानवता के कल्याण का निमित्त बनेगा एवं उन्हें भी अमरत्व प्राप्त होगा, यही विश्वास है। ■

मृत्यु की मुस्कान से मोक्ष की अनूठी यात्रा

भारत का इतिहास संत और मुनियों की गौरवमयी गाथाओं से भरा है। इस देश की धरती पर अनेक तीर्थंकर, अवतार, महापुरुष एवं संतपुरुष अवतरित हुए जिन्होंने अपने व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व से समाज व राष्ट्र को सही दिशा और प्रेरणा दी। महापुरुषों की इस अविच्छिन्न परम्परा में शासन गौरव मुनिश्री ताराचंदजी भी एक ऐसे ही क्रांतिकारी संत हैं, जिन्होंने राजस्थान के सरदारशहर कस्बे में आचार्य श्री महाश्रमणजी के आदेशानुसार 22 मार्च 2019 को संलेखना साधना प्रारंभ की और 7 अप्रैल 2019 को सोलह की तपस्या में स्व इच्छा से ही प्रेरित होकर आजीवन तिविहार अनशन (संथारा) को स्वीकार किया है। जैन धर्म में संथारा अर्थात संलेखना- संन्यास मरण या वीर मरण कहलाता है। यह आत्महत्या नहीं है और यह किसी प्रकार का अपराध भी नहीं है बल्कि यह आत्मशुद्धि का एक धार्मिक कृत्य एवं आत्म समाधि की मिसाल है और मृत्यु को महोत्सव बनाने का अद्भुत एवं विलक्षण उपक्रम है।

पुजा राजपूत

मुनि ताराचंदजी विनम्रता, आध्यात्मिक भावना, सहजता, सरलता और समर्पण के प्रतीक असाधारण संत हैं, जिन्होंने देश में हिंसा और क्रूरता के खिलाफ आवाज बुलंद करते हुए लगभग पचास हजार किलोमीटर की पदयात्रा की और अहिंसक समाज की संरचना में संलग्न रहे हैं। उन्होंने 89 वर्ष की आयु में अपने जीवन ही नहीं, बल्कि अपनी मृत्यु को भी सार्थक करने के लिये संथारा की कामना की, जिनका सम्पूर्ण जीवन भगवान महावीर के आदर्शों पर गतिमान रहा है। आप एक प्रतिष्ठित जैन संत हैं। जिन्होंने अपने त्याग, तपस्या, साहित्य-सृजन, संस्कृति-उद्धार के उपक्रमों से एक नया इतिहास बनाया है। एक सफल साहित्यकार, प्रवक्ता, साधक एवं प्रवचनकार के रूप में न केवल जैन समाज बल्कि सम्पूर्ण अध्यात्म-जगत में सुनाम अर्जित किया हैं। वे बहुआयामी साहित्य के सृजनकार हैं। एक महान साधक एवं आध्यात्मिक युगपुरुष भी हैं। अपने साहित्य के माध्यम से वे मानवीय मूल्यों के प्रति जनचेतना का सृजन अनेक वर्षों से करते रहे हैं। समाज में व्याप्त बुराइयों एवं विसंगतियों को दूर करने के लिये अपनी लेखनी एवं व्यवहार द्वारा जन-जन को आन्दोलित कर व्यापक परिवर्तन लाने का अभिनव उपक्रम किया हैं।

मुनि ताराचंदजी का जन्म राजस्थान के बीकानेर जिले के अंतर्गत ह्यरासीसरह्ल नामक छोटे कस्बे में 19 जनवरी 1931 में हुआ। पिताश्री रूपलालजी चोरड़िया के आकस्मिक निधन को देखकर मातुश्री मोती देवी व साध्वीश्री वृद्धाजी (बोरज) की प्रेरणा पाकर आपने मात्र 13 वर्ष की उम्र में सन् 1943 में गंगाशहर में आचार्य तुलसी के करकमलों से दीक्षा ग्रहण की। आपकी सहज साधना, आंतरिक समर्पण वृत्ति व संघनिष्ठा का मूल्यांकन करते हुए आचार्य श्री महाप्रज्ञजी ने 123वें मर्यादा महोत्सव के अवसर पर आपको ह्यशासन गौरवह्ल अलंकरण से अलंकृत किया। ऐसे तो प्रारंभ से ही आपकी साधना के प्रति नैसर्गिक रुचि सही है, समय-समय पर आपने अनेकों प्रेक्षा-प्रयोग, मौन सहित एकांतवास, मौन-ध्यान साधना, लम्बे-लम्बे उपवास एवं मौनपूर्वक सर्वेन्द्रिय संयम की साधना के प्रयोग किए। आपकी आत्मनिष्ठा और स्वस्थ जीवनशैली जन-जन के लिये प्रेरणा का माध्यम बनी रही। इस जीवनशैली के कारण ही जीवन के नौवें दशक में आप तुलनात्मक दृष्टि से पूर्णतः स्वस्थ, सक्रिय व ऊर्जा से परिपूर्ण हैं।

जैन धर्म में संथारा की अवधारणा एक स्वस्थ साधना पद्धति है। जिस तरह जीवन एक कला है तो मृत्यु भी उससे कम कलात्मक नहीं है। जो जीवन और मृत्यु की कला को जान जाते हैं वे व्यक्ति सचमुच महान होते हैं। अनशनपूर्वक मृत्यु का वरण न केवल जैन समाज के लिए बल्कि भारतीय संस्कृति के लिए एक विशिष्ट आध्यात्मिक अनुष्ठान रहा है। मृत्यु की मुस्कान से मोक्ष की इस यात्रा पर अग्रसर होकर मुनि ताराचन्दजी न केवल जैन समाज को बल्कि सम्पूर्ण मानवता को एक अनूठा सन्देश दे रहे हैं, जिसके साक्षी बनने के लिये देशभर से हजारों श्रद्धानुजन सरदारशहर पहुंच रहे हैं। आज के पदार्थवादी युग में जबकि हर व्यक्ति सुविधाओं एवं सुख का आकांक्षी है, ऐसे दौर में सुविधाओं का त्याग और संयमपूर्ण जीवन की यह प्रेरक घटना न केवल अलौकिक-विलक्षण हैं, बल्कि आध्यात्मिक जीवन का एक अनूठा अध्याय है। प्रश्न मृत्यु का नहीं, मृत्यु से जुड़ी पवित्र भावना का है। केवल सीढ़ी नहीं, सीढ़ी की हर पायदान मूल्यवत्ता रखता है मंजिल तक पहुंचने में। इसी प्रकार संथारे का हर अनुष्ठान न केवल संथारा करने वाले व्यक्ति की आत्मा को बल्कि उसके परिपार्श्व में आने वाले असंख्य लोगों की आत्मा को विशुद्धि दे सकता है। संथारे की तुलना आत्महत्या से करना या ऐसा चिंतन मन में लाना भी एक पवित्र सोच पर कुठाराघात करना है। सचमुच कितना पवित्र है आत्मशुद्धि का यह अनुष्ठान। कितना जागरूक प्रयत्न है कृत कर्मों की आत्मालोचन का। संथारा किसी शान-शौकत, मान-प्रतिष्ठा, धन-वैभव के लिए नहीं किया जाता बल्कि यह आत्मकल्याण एवं मोक्ष प्राप्ति का मार्ग है। मृत्यु को एक आदर्श परिणति देने का नाम है संथारा। आचार्य विनोबा भावे और वीर सावरकरजी जैसे लोगों ने भी जैन धर्म की इस साधना पद्धति को अपनाकर मृत्यु का वरण किया था। मेरी दृष्टि में स्वाभाविक मृत्यु से पूर्व की सभी मौतें आत्महत्या नहीं होती। जो लोग असंतोष, निराशा और दुर्भाग्य से घबराकर जीने की इच्छा होते हुए भी भली-भांति जी नहीं सकते अतः घोर निराशा में स्वयं को समाप्त कर देते हैं, वे आत्महंता होते हैं। लेकिन जो लक्ष्यपूर्ति की पूर्ण संतुष्टि से, आत्मकाम से, प्रसन्नता से अपना प्राण त्याग करते हैं वे ईश्वर के चरणों में आत्मनिवेदक कहे जाते हैं। और उनका इस तरह मृत्यु वरण करना ईश्वर के प्रति आत्मसमर्पण कहा जाता है। मृत्यु का इससे अच्छा और आदर्श स्वरूप दूसरा नहीं हो सकता। विवेकपूर्वक समाधि मृत्यु का वरण एक पवित्र एवं आध्यात्मिक अनुष्ठान है। आज के घोर भौतिकवादी एवं सुविधावादी युग में मुनि ताराचन्दजी की त्याग, संयम और अनशन की भावना एक विरल घटना बनती जा रही है, उन्होंने समाधिपूर्वक मृत्यु का वरण करने का निर्णय लेकर जैन धर्म के महान एवं पवित्र आदर्श को प्रतिष्ठापित करने का साहसपूर्ण उपक्रम किया है। निश्चित ही इस संथारे से दुनिया में भारत की आध्यात्मिक छवि को जो सम्मान मिल रहा है, उससे जैन धर्म और उसकी त्याग और संयम परंपरा को एक नया परिवेश एवं प्रतिष्ठा प्राप्त होगी।

किसी भी देश की माटी को प्रणम्य बनाने एवं कालखंड को अमरता प्रदान करने में संतों की अहं भूमिका होती है। धर्मनेता होते हुए भी मुनि ताराचन्दजी राष्ट्र की अनेक समस्याओं के प्रति जागरूक ही नहीं रहे हैं, अपितु समय-समय पर समस्याओं के समाधान के अनेक विकल्प भी प्रस्तुत करते रहे हैं। यही कारण है कि उनकी सांस-सांस में मानवीय मूल्यों के उत्थान की आहत सुनाई देती रही है, उनकी वाणी में लोकमंगल और सर्वकल्याण की भावना प्रतिध्वनित होती रही है, उन्होंने जीवन के बहुमूल्य क्षण अपाहिज मानवता की सेवा में समर्पित कर दिए। ऐसे दूरद्रष्टा और उदात्त महापुरुष का संथारा द्वारा मृत्यु को महोत्सव का स्वरूप प्रदान करना भी मानव कल्याण का ही उपक्रम है, ऐसे महामानव संतमनीषी के कर्तृत्व को उकेरना सूर्य को दीपक दिखाना होगा या मोम के दांतों से लोहे के चने चबाना। मुनि ताराचन्दजी ने जैन धर्म की सबसे प्राचीन आत्म उन्नयन की परम्परा को अपनाने का एक साहसिक कदम उठाते हुए जैन धर्म की आध्यात्मिक विरासत को सुरक्षित रखने का उपक्रम किया है एवं इसकी प्रेरणा दी है। जन-जन के घट-घट में मृत्यु की विलक्षण परम्परा का दीप प्रज्ज्वलित कर अंतर के पट खोलने का संदेश दिया हैं। जन्म और मृत्यु एक चक्र है, आदमी आता है, गुजर जाता है, आखिर क्यों? क्या मकसद है उसके आने-जाने और होने का। वह आकर जाता क्यों है? पुख्ता जमीन क्यों नहीं पकड़ लेता? क्या उसके इस तरह होने के पीछे कोई राज है? कुल मिलाकर मुनि ताराचन्दजी ने संथारा स्वीकार करके एक नया इतिहास रचा है। वे अपनी मृत्यु को इसी प्रकार धन्य करके अमरत्व की ओर गति कर रहे हैं। ■

शरीर को छोड़ने में ज्ञानी को न भय होता है और न ममत्व

असल में आसक्ति या राग तमाम विपत्तियों की जड़ है और अनासक्ति जननी है मुक्ति की, शांति की, समता की। अनादि संसार में कोई भी ऐसा जीव नहीं है जो जन्म लेकर मरण को प्राप्त न हुआ हो। सभी का अपने-अपने सुनिश्चित समय में मरण अवश्य हुआ है। कोई भी विद्या, मणि, मंत्र, तंत्र, दिव्यशक्ति, औषध आदि मरण से बचा नहीं सकते। अपनी आयु के क्षय होने पर मरण होता ही है। कोई भी जीव यहां तक कि तीर्थंकर परमात्मा भी, अपनी आयु अन्य जीव को दे नहीं सकते और न उसकी आयु बढ़ा सकते हैं और न हर सकते हैं। अज्ञानी मरण को सुनिश्चित जानते हुए भी आत्महित के लिए किंकर्तव्यविमूढ़ रहता है। जबकि ज्ञानी मरण को सुनिश्चित मानता है। वह जानता है कि जिस प्रकार वस्त्र और शरीर भिन्न हैं, उसी प्रकार शरीर और जीव भिन्न-भिन्न हैं। इसलिए छूटते हुए शरीर को छोड़ने में ज्ञानी को न भय होता है और न ममत्व, अपितु उत्साह होता है। यही उत्साह संथारा की आधारभित्ति है और पुनर्जन्म या जन्म-जन्मांतर या उसकी शृंखला को मेटने या काटने की कला है, उस कला से साक्षात्कार करने का संकल्प लेकर मुनि ताराचन्दजी मृत्यु को महोत्सव का स्वरूप प्रदान कर रहे हैं। जैन धर्म के मृत्यु महोत्सव एवं कलात्मक मृत्यु को समझना न केवल जैन धर्मावलम्बियों के लिये बल्कि आम जनता के लिये उपयोगी है। यह समझना भूल है कि संथारा लेने वाले व्यक्ति का अन्न-जल जानबूझकर या जबरदस्ती बंद करा दिया जाता है। संथारा स्व-प्रेरणा से लिया गया निर्णय है। जैन धर्म-दर्शन-शास्त्रों के विद्वानों का मानना है कि आज के दौर की तरह वेंटिलेटर पर दुनिया से दूर रहकर और मुंह मोड़कर मौत का इंतजार करने से बेहतर है संथारा द्वारा मृत्यु का सम्मापूर्वक वरण करना। यहाँ धैर्यपूर्वक अंतिम समय तक जीवन को पूरे आदर और समझदारी के साथ जीने की कला को आत्मसात किया जाता है। मुनिश्री ताराचन्दजी ने भगवान महावीर द्वारा निरूपित अहिंसा, अनेकांत और अपरिग्रह का पाठ दुनिया को पढ़ाने का बीड़ा उठाया था बल्कि अब अपने इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए अहर्निश संलग्न रहते हुए अपनी जीवनयात्रा को समाधिमरण के माध्यम से मोक्ष की ओर अग्रसर कर दी है। वे अपने जन्म से ही नहीं बल्कि मृत्यु से भी संसार को उपकृत कर रहे हैं। ऐसे महामानव को प्रणाम।

हिन्दी की उपेक्षा को चुनावी मुद्दा बनाये

देश के लोकतांत्रिक इतिहास में सबसे चर्चित होने वाला आसन्न आम चुनाव क्या मुद्दाविहीनता, फूहड़ता, भाषाई अशिष्टता, निजी अपमान के लिये ही याद किया जायेगा? सवाल है कि क्या हमारी राजनीतिक बिरादरी राष्ट्रीयता एवं राष्ट्रीय प्रतीकों से जुड़े किसी मुद्दे पर कोई सार्थक या गंभीर बहस छेड़ेंगी? क्या लोकतंत्र का यह महापर्व अपने राष्ट्रीय अस्तित्व एवं अस्मिता के लिये कोई ठोस उपक्रम के लिये जाना जायेगा? क्यों नहीं लोकतंत्र का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण अनुष्ठान अपने राष्ट्रीय प्रतीकों जैसे राष्ट्रभाषा हिन्दी, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय गीत, राष्ट्रीय पक्षी आदि को सुदृढ़ता प्रदान करने का माध्यम बनता? चुनाव में प्रचार का सशक्त माध्यम हिन्दी ही होता है, लेकिन जिस हिन्दी का उपयोग करके प्रत्याशी संसद में पहुंचते हैं, वहां पहुंचते ही हिन्दी को भूल जाते हैं, विदेशी भाषा अंग्रेजी के अंधभक्त बन जाते है, यह लोकतंत्र की एक बड़ी विसंगति है, राष्ट्रभाषा का अपमान है।

असलम खान

हिन्दी की दुर्दशा एवं उपेक्षा आहत करने वाली है। इस दुर्दशा के लिये हिन्दी वालों का जितना हाथ है, उतना किसी अन्य का नहीं। अंग्रेजों के राज में यानी दो सौ साल में अंग्रेजी उतनी नहीं बढ़ी, जितनी पिछले सात दशकों में बढ़ी है। इस त्रासद स्थिति की पड़ताल के लिये हिन्दी वालों को अपना अंतस खंगालना होगा, चुनाव के माहौल में यह एक बड़ा मुद्दा बनना चाहिए। पैसा, तथाकथित आधुनिकता, समृद्धि एवं राजनीतिक मानसिकता इसके कारण प्रतीत होते हैं तो भी इसकी सूक्ष्मता में जाने की जरूरत है। यह खुशी की बात है कि नरेन्द्र मोदी सरकार ने अपने शासनकाल में हिंदी को प्रोत्साहन देने की लिये प्रयास किये हैं, न केवल भारत बल्कि विदेशों में भी उनके प्रयासों से हिन्दी का गौरव बढ़ा है। प्रश्न फिर भी खड़ा है कि उन्होंने कोई बड़ा निर्णय लेते हुए क्यों नहीं राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित किया?

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान ने अंग्रेजी के सार्वजनिक इस्तेमाल पर कड़ा प्रहार किया है, जैसा कभी गांधीजी और लोहियाजी किया करते थे। विपक्षी नेता बिलावल भुट्टो पाकिस्तान की संसद में अंग्रेजी में बोलते हैं। इमरान ने इस पर आपत्ति की है। उनका कहना है कि उन्हें राष्ट्रभाषा उर्दू में बोलना चाहिए। पाकिस्तान की संसद में अंग्रेजी में बोलना 90 प्रतिशत पाकिस्तानी जनता का अपमान है, जो अंग्रेजी नहीं समझती। यह बात हिंदुस्तान पर भी लागू होती है लेकिन हमारे किसी प्रधानमंत्री ने आज तक क्यों नहीं ऐसे साहस का परिचय दिया। यदि डॉ. लोहिया प्रधानमंत्री बन गए होते तो वे तो संसद में अंग्रेजी के प्रयोग पर पूर्ण प्रतिबंध लगा देते। आजादी के सत्तर वर्ष बाद भी भारत में कानून अंग्रेजी में बनते हैं और अदालत की बहस और फैसलों की भाषा भी अंग्रेजी ही है। उच्च शिक्षा में भी अंग्रेजी माध्यम का बोलबाला है। नौकरशाही सारा प्रशासन अंग्रेजी में चलाती है, ये स्थितियां हमारी राष्ट्रीयता पर प्रश्नचिन्ह खड़े करती है।

गतदिनों उपराष्ट्रपति वैंकय्या नायडू ने हिन्दी के बारे में ऐसी बात कही थी, जिसे कहने की हिम्मत महर्षि दयानंद, महात्मा गांधी और डॉ. राममनोहर लोहिया में ही थी। उन्होंने कहा कि ह्यअंग्रेजी एक भयंकर बीमारी है, जिसे अंग्रेज छोड़ गए हैं।ह्ल अंग्रेजी का स्थान हिंदी को मिलना चाहिए, लेकिन आजादी के 70 साल बाद भी सरकारें अपना काम-काज अंग्रेजी में करती हैं, यह देश के लिये दुर्भाग्यपूर्ण एवं विडम्बनापूर्ण स्थिति है। वैंकय्या नायडू का हिन्दी को लेकर जो दर्द एवं संवेदना है, वही स्थिति 2019 के चुनाव में उम्मीदवार बने हर प्रत्याशी की होनी चाहिए। इन चुनावों में हिन्दी को एक चुनावी मुद्दा बनाया जाना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने भी राष्ट्र एवं राज भाषा हिन्दी का सम्मान बढ़ाने एवं उसके अस्तित्व एवं अस्मिता को नयी ऊंचाई देने के लिये अनूठे उपक्रम किये हैं। हिन्दी राष्ट्रीयता एवं राष्ट्र का प्रतीक है, उसकी उपेक्षा एक ऐसा प्रदूषण है, एक ऐसा अंधेरा है जिससे छांटने के लिये ईमानदारी से लड़ना होगा। क्योंकि हिन्दी ही भारत को सामाजिक-राजनीतिक और भाषायिक दृष्टि से जोड़नेवाली भाषा है। हिन्दी को सम्मान दिलाने के लिये इन चुनावों में व्यापक बहस होनी चाहिए और आम मतदाता भी ऐसे ही उम्मीदवारों को वोट दे जो राजभाषा हिन्दी को सुदृढ़ करने के लिये प्रतिबद्ध हो।

देश में एक तबका अंग्रेजी मानसिकता का है। जो आवश्यक मानदंडों की उपेक्षा करते हुए जिस तरह की भाषाई विकृतियां प्रस्तुत कर रहा है, उस पर इन चुनावों में हल्ला बोलने की आवश्यकता है। लेकिन हम में यानी हिन्दीभाषियों में अपनी मातृभाषा के प्रति प्रेम और प्रतिबद्धता अभी तक जागृत नहीं हो पाई है। चुनाव में हिन्दी को एक चुनावी मुद्दा बनाकर हम भारत के अंग्रेजी मानसिकता के दिमागों में खलबली मचा सकते हैं। कई अंग्रेजी अखबारों और टीवी चैनलों में ऐसा होने से बौखलाहट आ सकती है। क्योंकि ऐसा होने का अर्थ है देश के सबसे बौद्धिक और ताकतवर तबके की दुखती रग पर उंगली रखना। हिन्दी भाषा का मामला भावुकता का नहीं, ठोस यथार्थ का है, राष्ट्रीयता का है। हिन्दी विश्व की एक प्राचीन, समृद्ध तथा महान भाषा होने के साथ ही हमारी राजभाषा भी है, यह हमारे अस्तित्व एवं अस्मिता की भी प्रतीक है, यह हमारी राष्ट्रीयता एवं संस्कृति की भी प्रतीक है। भारत की स्वतंत्रता के बाद 14 सितम्बर 1949 को संविधान सभा ने एक मत से यह निर्णय लिया कि हिन्दी ही भारत की राजभाषा होगी। इस महत्वपूर्ण निर्णय के बाद ही हिन्दी को हर क्षेत्र में प्रचारित-प्रसारित करने के लिए 1953 से सम्पूर्ण भारत में 14 सितम्बर को प्रतिवर्ष हिन्दी-दिवस के रूप में मनाया जाता है। गांधीजी ने राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की वकालत की थी। वे स्वयं संवाद में हिन्दी को प्राथमिकता देते थे। आजादी के बाद सरकारी काम शीघ्रता से हिन्दी में होने लगे, ऐसा वे चाहते थे। राजनीतिक दलों से अपेक्षा थी कि वे हिन्दी को लेकर ठोस एवं गंभीर कदम उठायेंगे। लेकिन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति से आक्सीजन लेने वाले दल भी अंग्रेजी में दहाड़ते देखे जा सकते हैं। हिन्दी को वोट मांगने और अंग्रेजी को राज करने की भाषा हम ही बनाए हुए हैं। कुछ लोगों की संकीर्ण मानसिकता है कि केन्द्र में राजनीतिक सक्रियता के लिये अंग्रेजी जरूरी है। ऐसा सोचते वक्त यह भुला दिया जाता है कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जैसे शीर्ष पर बैठे नेता बिना अंग्रेजी की दक्षता के सक्रिय और सफल है। नायडू एक अहिन्दी प्रांत से होकर भी हिन्दी में बोलते हैं, उसे आगे बढ़ाने की बात करते हैं। तो अन्य नेता ऐसा क्या नहीं करते? हिन्दी राष्ट्रीयता की प्रतीक भाषा है, उसको राजभाषा बनाने एवं राष्ट्रीयता के प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठापित करने का यह तो कदापि अर्थ नहीं है कि अंग्रेजी में अनुसंधान बंद कर दो, अंग्रेजी में विदेश नीति या विदेश-व्यापार मत चलाओ या अंग्रेजी में उपलब्ध ज्ञान-विज्ञान का बहिष्कार करो। उसको उचित सम्मान एवं गौरव प्रदान करने का अर्थ है कि देश की शिक्षा, चिकित्सा, न्याय प्रशासन आदि जनता की जुबान में चलना चाहिए। दो मराठी या बांग्ला भाषी लोग अंग्रेजी जानते हुए भी अपनी भाषा में बात करते हुए गर्व महसूस करते हैं। लेकिन हिन्दी में प्रायः ऐसा नहीं होता। हिन्दी वाला अपनी अच्छी हिन्दी को किनारे कर कमजोर अंग्रेजी के साथ खुद को ऊंचा समझने का भ्रम पालता है। आखिर ऐसा क्यों हो रहा है? क्यों हम खुद ही अपनी भाषा एवं अपनी संस्कृति को कमजोर करने पर तुले हैं? चुनाव लोकतंत्र का महाकुंभ है और भारत लोकतांत्रिक राष्ट्र है लेकिन लोक की भाषा कहां है? हिन्दी को हमने पांवों में बिठा दिया है और अंग्रेजी को सिंहासन पर बिठा रखा है। इन आम चुनावों में हमें अंग्रेजी का नहीं, उसके वर्चस्व का विरोध करना होगा। यदि भारत के पांच-दस लाख छात्र अंग्रेजी को अन्य विदेशी भाषाओं की तरह सीखें और बहुत अच्छी तरह सीखें तो उसका स्वागत है लेकिन 20-25 करोड़ छात्रों के गले में उसे पत्थर की तरह लटका दिया जाए तो क्या होगा? हिंदी को दबाने की नहीं, ऊपर उठाने की आवश्यकता है। लेकिन अंग्रेजी के वर्चस्व के कारण आज भी हिन्दी भाषा को वह स्थान प्राप्त नहीं है, जो होना चाहिए। चीनी भाषा के बाद हिन्दी विश्व में सबसे अधिक बोली जाने वाली विश्व की दूसरी सबसे बड़ी भाषा है। भारत और अन्य देशों में 70 करोड़ से अधिक लोग हिन्दी बोलते, पढ़ते और लिखते हैं। ■

भाषा राष्ट्र की एकता, अखण्डता तथा प्रगति के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण

किसी भी देश की भाषा और संस्कृति किसी भी देश में लोगों को लोगों से जोड़े रखने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। भाषा राष्ट्र की एकता, अखण्डता तथा प्रगति के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण होती है। कोई भी राष्ट्र बिना एक भाषा के सशक्त व समुन्नत नहीं हो सकता है अतः राष्ट्र भाषा उसे ही बनाया जाता है जो सम्पूर्ण राष्ट्र में व्यापक रूप से फैली हुई हो। जो समूचे राष्ट्र में सम्पर्क भाषा के रूप में कारगर सिद्ध हो सके। राष्ट्र भाषा सम्पूर्ण देश में सांस्कृतिक और भावात्मक एकता स्थापित करने का प्रमुख साधन है। महात्मा गांधी ने सही कहा था कि राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।ह्ल इन आम चुनावों में इस गूंगेपन को दूर करने के स्वर बुलन्द होने चाहिए। यह कैसी विडम्बना है कि जिस भाषा को कश्मीर से कन्याकुमारी तक सारे भारत में समझा जाता हो, उस भाषा के प्रति घोर उपेक्षा व अवज्ञा के भाव, हमारे राष्ट्रीय हितों में किस प्रकार सहायक होंगे। हिन्दी का हर दृष्टि से इतना महत्व होते हुए भी प्रत्येक स्तर पर इसकी इतनी उपेक्षा क्यों? इस उपेक्षा को इन चुनावों में कुछ ठोस संकल्पों एवं अनूठे प्रयोगों से ही दूर किया जा सकेगा। इसी से देश का गौरव बढ़ेगा, ऐसा हुआ तो यह आम चुनाव एक स्वर्णिम इतिहास का सृजन कर सकेगा।

12वीं के बाद क्या चुनें!

आजकल प्रतिष्ठित परंपरागत पाठ्यक्रमों में भी दाखिला लेना आसान नहीं रह गया है। शायद यही कारण है कि छात्र-छात्राओं के लिए बारहवीं का परिणाम खास मायने रखता है। यह तनाव निरंतर बना रहता है कि किस कोर्स में दाखिला लेना चाहिए? दाखिला कैसे मिलेगा? सरकारी संस्थान में नामांकन कराना बेहतर होगा या प्राइवेट संस्थान में? इन्हीं के बारे में विस्तार से बता रहे हैं करियर कंसल्टेंट एक्सपर्ट...

छात्र-छात्राओं में कोर्स के चुनाव को लेकर उधेड़बुन बारहवीं कक्षा के परीक्षा-परिणाम आने तक लगातार चलती रहती है। दरअसल युवाओं का भावी करियर काफी हद तक बारहवीं कक्षा के परीक्षा-परिणामों पर निर्भर करता है। लेख में ऐसी सामान्य बातों या संकेतों पर ध्यान देने की सलाह दी जा रही है, जो आपके सामने हैं, पर जिन पर अमूमन ध्यान नहीं जाता, या जिन्हें नजरअंदाज कर दिया जाता है।

एप्टिट्यूड: कोर्स का चुनाव करने में सबसे अहम आधार छात्र का अपना एप्टिट्यूड या रुझान होना चाहिए। यदि उसका दिमाग तकनीकी कार्यकलापों में ज्यादा लगता है तो जाहिर है उसे टेक्निकल कोर्स के विकल्पों पर ध्यान देना चाहिए। यदि उसकी खेलों में दिलचस्पी है तो बीएससी (फिजिकल एजुकेशन) उसके लिए भविष्य निर्माण की दृष्टि से अच्छा कोर्स कहा जा सकता है। साइंस पसंद नहीं है तो आर्ट्स में अवसर तलाशे जा सकते हैं। लेखन में रुचि है तो साहित्य या मीडिया के क्षेत्र में आगे बढ़ने के मौके मिल सकते हैं।

बारहवीं के नतीजे: दिल्ली यूनिवर्सिटी सहित कई संस्थानों के अधिकतर कोर्स में बारहवीं के प्राप्तांक के आधार पर भी दाखिले दिए जाते हैं। ऐसे में इसमें कोई संदेह नहीं होना चाहिए कि यह परिणाम आगे की काफी कुछ दिशा तय कर देता है। छात्र जिन विषयों में सबसे अच्छे अंक हासिल करता है वे एक संकेत हो सकते हैं कि वह किन कोर्स के लिए उपयुक्त है। मत भूलिए कि प्रत्येक विषय अपने-आप में करियर की अलग राह खोलता है। उदाहरण के लिए, आर्ट्स स्ट्रीम में गणित और अर्थशास्त्र में अच्छे अंक हैं तो बीए (ऑनर्स) के लिए अर्थशास्त्र के बेहतरीन कोर्स के बारे में विचार किया जा सकता है। इसी तरह से बायोलॉजी में प्रदर्शन अच्छा रहा है तो एमबीबीएस, जूलॉजी, बॉटनी, बायोटेक्नोलॉजी, माइक्रोबायोलॉजी, एग्रीकल्चर साइंस आदि विषयों से संबंधित कोर्स के विकल्पों के बारे में विचार किया जा सकता है। गणित से जुड़े कोर्स में गणित (ऑनर्स), स्टेटिस्टिक्स आदि में बीएससी किया जा सकता है। इंग्लिश /हिंदी में अपेक्षाकृत ज्यादा अंक होने पर बीए (ऑनर्स) इंग्लिश/हिंदी, पत्रकारिता, पब्लिक रिलेशंस आदि कोर्स की राहें खुल सकती हैं।

शिक्षक की राय: आपके बच्चे को जिन शिक्षकों ने वर्षों तक पढ़ाया है, उनकी सलाह कोर्स चयन में सहायक हो सकती है। वे बता सकते हैं कि छात्र ने अपने पूरे स्कूली दौर में किन विषयों में किस स्तर की योग्यता या दिलचस्पी दिखाई। ऐसे में किसी पसंदीदा विषय में कम अंक होने के बावजूद उससे जुड़े कोर्स में छात्र को दाखिल कराने के बारे में सोचा जा सकता है।

कोर्स का कुल खर्च: किसी महंगे कोर्स में दाखिला लेने से पहले यह समझ लेना चाहिए कि यह धनराशि कैसे जुटाएंगे, अन्यथा बीच में कोर्स छोड़ने की नौबत भी आ सकती है। ■

भावी लक्ष्य

छात्र ने अपने भावी करियर के बारे में क्या सोचा है, यह भी कम महत्वपूर्ण संकेत नहीं है, जिसके आधार पर कोर्स के बारे में निर्णय लेने में आसानी हो सकती है...

गेम्स/डांस/ड्रामा/म्यूजिक: गेम्स, फिजिकल एजुकेशन, म्यूजिक, डांस-ड्रामा आदि में कई छात्र-छात्राएं काफी अच्छा प्रदर्शन करते हैं। हो सकता है कि यह उनका शौक हो। ऐसा हो तो नॉन एकेडेमिक कोर्स को भी करियर के विकल्प के तौर पर चुनने में बुराई नहीं है। यह न भूलें कि प्रदर्शनकारी कलाओं की आज के समय में काफी कद्र है।

प्रतियोगी परीक्षा का लक्ष्य: यूपीएससी/पीसीएस, बैंकिंग और रेलवे सरीखी प्रतियोगी परीक्षाओं के जरिये भविष्य संवारने की तमन्ना रखने वाले युवाओं को अच्छी यूनिवर्सिटी का चयन कर पारंपरिक कोर्स में दाखिला लेने के बारे में सोचना चाहिए।

स्वरोजगार: भविष्य में जॉब के बदले अपना काम शुरू करने वाले युवाओं को बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन या बिजनेस मैनेजमेंट जैसे कोर्स का चयन करना लाभदायक हो सकता है।

विदेश में पढ़ाई/जॉब: इसके लिए विदेशी भाषा पर आधारित कोर्स काफी उपयोगी हो सकते हैं। ऐसे कोर्स में एडमिशन पाना अपेक्षाकृत अधिक आसान भी होता है। दूसरी बात यह है कि इसमें पिछले एकेडेमिक रिकॉर्ड का भी कोई प्रभाव नहीं प?ता और बिलकुल नए सिरे से शुरुआत होती है।

पैतृक बिजनेस: जो युवा बाप-दादा के समय से चल रहे अपने पारिवारिक व्यवसाय में जाने की इच्छा रखते हैं, उन्हें बिजनेस से संबंधित स्नातक स्तर के कोर्स (बीबीए, बीबीएम आदि) के बारे में विचार करना चाहिए।

ऑनलाइन ये जांच करें

- जहां दाखिला लेने जा रहे हैं, वहां संचालित कोर्स एआईसीटीई या संबंधित नियामक निकाय से मान्यता प्राप्त है या नहीं? अगर मान्यता प्राप्त है तो उसकी अवधि कब तक है?
- संस्था और विभाग की वेबसाइट है कि नहीं? अगर नहीं है या उस पर पूरी जानकारी नहीं दी गई है तो वहां दाखिला लेने का जोखिम नहीं उठाएं।

खुदी को कर बुलंद इतना कि हर तकदीर से पहले
खुदा बंदे से खुद पूछे बता तेरी रजा क्या है।

आपकी हर प्रॉब्लम का सॉल्युशन है एजुकेशन

भरत बंसल

अपनी मेहनत लगन और कर्तव्य निष्ठा के दम पर महज छोटी सी उम्र में स्वयं को उधोग जगत का ध्रुवतारा साबित कर चुके 14 मार्च 1996 को जन्मे भरत बंसल की सोच और उनका व्यक्तित्व उन्हें असधारण शख्सियत बनाती है। भरत कहते हैं जीवन की विषम परिस्थितियां आपको बहुत कुछ सिखाती हैं जितनी कठिन परिस्थितियों से आप गुजरते हैं उतने ही मजबूत और सक्षम बनकर उभरते हैं, अशोक ऑटो सेल्स के निदेशक भारत बंसल ने एक इंटरव्यू के दौरान **युवक पत्रिका** से बातचीत की जिसमें उनकी नीजी जिंदगी और प्रोफेशनल लाइफ से जुड़े कई अनुभव उभरकर सामने आये...

बचपन कैसा बीता, पारिवारिक पृष्ठभूमि कैसी रही?

पारिवारिक पृष्ठभूमि अच्छी रही, दादाजी श्री राम किशोर बंसल सन् 1955 में सिरसा, हरियाणा से बिजनेस के लिए आगरा आए। टाटा मोटर्स ने सन 1955 में अपना प्रोडक्शन शुरू किया, उसके ठीक एक साल बाद वर्ष 1956 में दादाजी ने टाटा की डीलरशिप आगरा में शुरू की, जिसमें उन्होंने काफी सफलता पाई। आगे चलकर पिताजी भी उनके साथ ऑटोमोबाइल बिजनेस में सक्रिय हो गए, लेकिन साल 1988 हमारे परिवार के लिए काफी दुखद साबित हुआ। एक एक्सीडेंट में मेरे पिताजी, मां और बहन की आकस्मिक मृत्यु हो गई और परिवार पूरी तरह बिखर गया। तब मैं महज 2 साल का था, फिर मेरी बुआ जी डॉ। रंजना बंसल ने परिवार और कारोबार को संभाला।

आपकी एजुकेशन कहां से हुई और करियर की शुरूआत कैसे की?

मेरी स्कूलिंग सिंधिया स्कूल, ग्वालियर से हुई। उसके बाद अमेरिका की प्रड्यू यूनिवर्सिटी से मैंने मैकेनिकल इंजीनियरिंग कर अपनी पढ़ाई की, फिर नॉर्वे की एक इंजीनियरिंग कंपनी में 1 साल मैंने जॉब किया। कैरियर की दिशा तय करने के लिए फैमिली की ओर से हालांकि मैं स्वतंत्रत था। मैंने अपॉर्चुनिटी देखी तो मुझे इंडिया मैं बिजनेस का अच्छा स्केल दिखा और साल 2010 में यहां आ गया। सबसे पहले मैंने रियल एस्टेट जॉइन किया और अशोक कॉसमॉस मॉल के अपने प्रोजेक्ट को 2 साल में स्टेब्लिस्स किया। उसके बाद में डीलरशिप के काम से जुड़ा जिसमें सबसे पहले मैंने वर्कशॉप देखना शुरू किया फिर एक्सपेंशन के साथ सेल्स पर भी मैंने काम प्रारंभ किया और इसी प्रकार धीरे-धीरे मैं कारोबार में पूरी तरह सक्रिय हो गया।

वर्तमान में आप किन-किन बिजनेस सेक्टर में काम कर रहे हैं?

वर्तमान में हम रियल एस्टेट और ऑटोमोबाइल सेक्टर में काम कर रहे हैं इनमें हमारा काफी स्ट्रांग होल्ड है और इसी में आगे विस्तार की योजना है क्योंकि आटोमोटिव में काफी अपॉर्चुनिटी हैं। यह क्षेत्र सिर्फ गाड़ी बेचने तक सीमित नहीं है इसमें गाड़ी सर्विस से लेकर फाइनेंस, इंश्योरेंस, री- मैन्यूफैक्चरिंग आदि का विस्तृत क्षेत्र है।

व्यक्ति की एजुकेशन उसको उसकी प्रोफेशनल लाइफ में सक्सेस बनाने में कितनी सहायक है?

देखिए, जैसे उदाहरण के तौर पर मैं अपनी बात करूं तो मैंने बिजनेस संभाला जिसकी एजुकेशन मैंने ली ही नहीं थी, मैंने मैकेनिकल इंजीनियरिंग की थी, मेरा मानना है एजुकेशन आपके वैचारिक स्तर को सुदृढ़ बनाती है। हो सकता है यह आपके प्रोफेशन पर सीधे रूप से प्रभावी न हो लेकिन आपकी एजुकेशन आपको सोचने का एक तरीका देती है अगर आपके सामने कोई प्रॉब्लम आ रही है तो उसका सॉल्यूशन आपको आपकी एजुकेशन ही देती है। ग्रेजुएशन और पोस्ट ग्रेजुएशन कर लिया और आपकी एजुकेशन कंप्लीट हो गई, ऐसा नहीं है एजुकेशन एक निरंतर ली जाने वाली प्रक्रिया है। जैसे मैंने अपनी मैकेनिकल इंजीनियरिंग कंप्लीट करने के बाद 1 साल का बिजनेस मैनेजमेंट में कोर्स किया उसके बाद डिजिटल मार्केटिंग को लेकर कोर्स किया और आगे एमबीए करना चाहता हूं तो यह लगातार सीखने और पढ़ने की इच्छा से ही हम तकनीकी और प्रतिस्पर्धा के युग में अपने आप को कामयाब बना सकते हैं।

शिक्षा सिर्फ करियर का साधन या संस्कारित भी करती है?

मेरा मानना है कि शिक्षा आपके करियर में तो अहम भूमिका निभाती ही है लेकिन संस्कारों की जहां तक बात है यह आपको आपके परिवार से ही मिलते हैं।

युवाओं की शारीरिक, मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण पहलू क्या है?

मेरी नजर में सबसे महत्वपूर्ण पहलू है सकारात्मक सोच, आज सामाजिक जीवन में नकारात्मक चीजें बड़ी तेजी के साथ लोगों में फैलती हैं इसलिए हमें हमेशा सकारात्मक सोच के साथ आगे बढ़ना चाहिए।

बदलती लाइफस्टाइल में युवाओं के सोचने और काम करने का तरीका बदल रहा है ऐसे में आप युवाओं को एक आदर्श जीवन की क्या सलाह देना चाहेंगे?

सबसे पहली जरूरत है कि आप अपनी सभ्यता और संस्कृति के साथ जुड़कर चलें, हमारी सभ्यता और संस्कृति हमें आध्यात्म से जोड़ती है और आध्यात्म से जुड़कर हमें विश्वास की शक्ति प्राप्त होती है। लाइफ में कई मौकों पर हमें विषम परिस्थितियों से जूझना होता है जहां हमें हमारी आध्यात्म की शक्ति ही हमें जो होगा बढ़िया होगा की भावना के साथ सकारात्मक विचार देकर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है।

कहा जाता कि ईश्वर ने सब कुछ पूर्व निर्धारित कर रखा है इस बात से आप कितना इत्तेफाक रखते हैं?

देखिए, हो सकता भगवान ने कुछ न कुछ निर्धारित कर रखा हो, लेकिन हमारी मेहनत और कर्म का कोई विकल्प नहीं है इसलिए हमें हमेशा अपना कर्म करते रहना चाहिए।

हिन्दुस्तान सर्वाधिक युवाओं वाला देश है इस युवा शक्ति के दम पर आप भारत के भविष्य की क्या तस्वीर देखते हैं?

मेरा मानना है कि इसमें एजुकेशन की अहम भूमिका है। इसलिए जरूरी है कि भारत के स्वर्णिम भविष्य के लिए हम युवाओं के शैक्षणिक स्तर को सुधारने पर जोर दें।

युवाओं में व्यक्तिगत विकास के साथ-साथ राष्ट्र के विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण पहलू क्या है?

सबसे महत्वपूर्ण बात, मेरा मानना है कि सिर्फ पैसा कमाना व्यक्तिगत विकास नहीं होता। व्यक्तिगत विकास के लिए जरूरी है कि आप अपने अंदर नए-नए स्किल डेवलप करें और नई तकनीकी और ज्ञान के साथ खुद को अपग्रेड करें इसी से आपका और आपके राष्ट्र का विकास होगा।

सोशल मीडिया पर आज का युवा काफी सक्रिय है इसको आप किस नजरिए से देखते हैं?

सोशल मीडिया को लेकर मेरी दोहरी राय है। हां यह ठीक है कि आप इसके जरिए वर्ल्ड वाइड कनेक्टेड रहते हैं लेकिन इसके विपरीत इस पर भ्रामक चीजों से आप प्रभावित भी होते हैं जो कि आपके लिए काफी हानिकारक है। इसका उपयोग सीमित और सही दिशा में करें यह बेहद जरूरी है।

लाइफ का कोई खास अनुभव जो आप अपने साथी युवाओं से साझा करना चाहे?

मेरा मानना है कि अच्छी परिस्थितियों के अलावा जीवन में जो आपके सामने जो बुरी परिस्थितियां आती हैं वह आपको बहुत कुछ सिखाती हैं। जितनी बुरी परिस्थितियों से आप गुजरते हैं उतने ही मजबूत और सक्षम बनकर उभरते हैं।

लाइफ का अगर कोई लम्हा दोहराने का मौका मिले तो ऐसा कौन सा वक्त है जो आप फिर से जीना चाहेंगे?

अगर ऐसा कोई मौका मिले तो मैं अपने स्कूल टाइम को निश्चित रूप से फिर से जीना चाहूंगा।

प्रोफेशनल लाइफ में कोई ऐसी सीख जो आपको आपके पेरेंट्स से मिली?

सबसे महत्वपूर्ण सीख जो मुझे मेरे दादाजी से मिली वह यह थी कि काम को अपने काम पर छोड़ कर आओ। घर पर आकर घर का रूटीन फॉलो करो, सुकून से परिवार के साथ वक्त बिताओ। टेंशन फ्री लाइफ दादाजी की हेल्थ का सबसे बड़ा राज था। 94 साल की उम्र तक वह ऑफिस गए और 96 साल की उम्र में उनका स्वर्गवास हुआ निश्चित रूप से वे आदर्श जीवन की एक मिसाल थे। ■

जब आपने कारोबार में कदम रखा तब आपको किस प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ा?

बिजनेस वर्ल्ड में वैसे तो हर रोज नई चुनौतियों का सामना करना पड़ता हैं। जब मैं कारोबार में आया तो यहां के तरीकों को समझने में मुझे तीन-चार साल का वक्त लगा, क्योंकि यहां पर काम करने का तरीका अन्य देशों के मुकाबले काफी अलग है। यहां बिजनेस में कई तरह के चेलेंज फेस करने होते हैं चाहे वह प्रशासनिक अनुमतियों का मसला हो या फिर कारोबार को खड़ा करने के लिए अनुभवी कर्मचारियों का। शुरू के दिनों में जब मैं बिजनेस में कुछ परिस्थितियों को लेकर मैं काफी परेशान था तब एक मेरे जानने वाले जोकि काफी सक्सेसफुल भी हैं उन्होंने मुझसे एक बात पूछी कि रियल स्टेट में पैसा है? तो मैंने उनको जवाब दिया हां पैसा है। तो उन्होंने कहा कि तो फिर सारे लोग रियल एस्टेट क्यों नहीं करते? तो उन्होंने बताया कि जो रियल स्टेट की परिस्थति है वह सारे लोग झेल नहीं पाते इसलिए सभी लोग इसे नहीं करते, अगर यह परिस्थितियां अनुकूल होती तो हर व्यक्ति इसमें होता और यदि सभी कर रहे होते तो जितना रिटर्न आज मिल रहा है उतना नहीं मिलता। जब मैंने ठंडे दिमाग से उनकी बात सुनी और समझी तो मुझे समझ आया कि जो काम आसान होता है उसमें न चैलेंज होता है, न मजा आता है और न प्रॉफिट होता है और जो काम हार्ड होता है उसमें सारी चीजें होती है।

श्रीलंका के आतंकी विस्फोटों से जुड़े सवाल

श्रीलंका अपनी शांति और मनोरतमा के लिये नई इबारत लिख ही रहा था कि वहां हुए सिलसिलेवार शक्तिशाली बम विस्फोटों एवं धमाकों के खौफनाक एवं त्रासद दृश्यों ने सम्पूर्ण मानवता को लहुलूहान कर दिया, आहत कर दिया और दहला दिया। कैसी उन्मादी आंधी पसरी कि 200 से अधिक लोगों का जीवन ही समाप्त कर दिया। हजारों गंभीर रूप से घायल हो गए तथा करोड़ों रुपये की सम्पत्ति नष्ट हो गई। इस प्रकार यह विस्फोटों की शृंखला, अमानवीय कृत्य अनेक सवाल पैदा कर रहे हैं।

मनोज कुमार

ऐसा लग रहा है कि कुछ उन्मादी लोगों के उन्माद में न जिन्दगी सुरक्षित है और न ही जीवन-मूल्यों की विरासत। आखिर कब रूकेगा हिंसा, आतंक एवं त्रासदी का यह खूनी खेल। इस तरह के हिंसा, भय, आतंक, अन्याय एवं अमानवीयता के घृणित कर्मों ने यह भी साबित कर दिया कि आदमी के मन में पाप का भय रहा ही नहीं। श्रीलंका के इस खूनी मंजर में ईस्टर के अवसर पर एक धर्म विशेष के लोगों को निशाना बनाया गया। चर्च और ऐसे होटलों पर हमले किए गए, जहां धर्म विशेष के लोगों का जमघट था। वे धार्मिक कार्य के लिए जुटे थे, खुशी मना रहे थे, आपस में मिल-जुल रहे थे, लेकिन आतंकियों को यह पसंद नहीं आया। उनकी शैतानी एवं उन्मादी मानसिकता की जितनी निंदा की जाए, कम है। जाहिर है, इन हमलों से पूरी दुनिया में मातम और चिंता का माहौल है। तमाम देशों के राष्ट्राध्यक्ष और नेता इन हमलों की कड़े शब्दों में यथोचित निंदा कर रहे हैं। ये हमले मानवता पर ठीक उसी तरह से हमला हैं, जैसे हाल ही में न्यूजीलैंड में मस्जिद पर हुआ हमला था। दोनों ही जगह धार्मिक कृत्य में लगे लोगों को निशाना बनाया गया है। हिंसा की यह बढ़ती प्रवृत्ति बेहद खतरनाक है।

इन तथाकथित हिंसक एवं आतंकवादी लोगों को, जो हिंसा एवं आतंक का रूप बदल-बदल कर अपना करतब दिखाते रहते हैं- विनाश और निर्दोष लोगों की हत्या करते रहते हैं। निदोर्षों को मारना कोई मुश्किल नहीं। कोई वीरता नहीं। पर निर्दोष तब मरते हैं जब पूरी मानवता घायल होती है। यह दर्द एवं पीड़ा केवल श्रीलंका की नहीं है, बल्कि शांतिप्रिय दुनिया के तमाम देशों की है। उन खूनी हाथों का जिम्मेदारी लेना, समूची दुनिया की बड़ी शक्तियों के सम्मुख एक बड़ी चुनौती है, अगर समय पर इन आतंकवादी लोगों और संगठनों को करारा जबाव नहीं दिया गया, उनको नियंत्रित नहीं किया गया तो उन खूनी हाथों में फिर खुजली आने लगेगी। दुनिया के तमाम देशों को संगठित होकर इस काम में पूरी शक्ति और कौशल लगाना होगा। आदमखोरों की मांद तक जाना होगा। अन्यथा हमारी खोजी एजेंसियों की काबिलीयत पर प्रश्नचिन्ह लग जाएगा कि कोई दो-चार व्यक्ति कभी भी श्रीलंका, भारत, न्यूजीलैंड जैसे देशों की शांति और जन-जीवन को अस्त-व्यस्त कर सकते हैं। कोई भी उन्मादी उद्योग, व्यापार ठप्प कर सकते हैं। कोई भी किसी भी देश की शासन प्रणाली को गूंगी बना सकते हैं। श्रीलंका के लिए तो यह और भी दुखद है क्योंकि इस देश ने सिंहली, बौद्ध, तमिल तनाव को लगभग दो दशक तक झेला है। यह तो पूरी दुनिया के लिए खुशखबरी थी कि श्रीलंका हिंसा के दुखद और शर्मनाक दौर से निकल आया था। दस वर्ष पहले तमिलों के अतिवादी संगठन लिट्टे के खात्मे

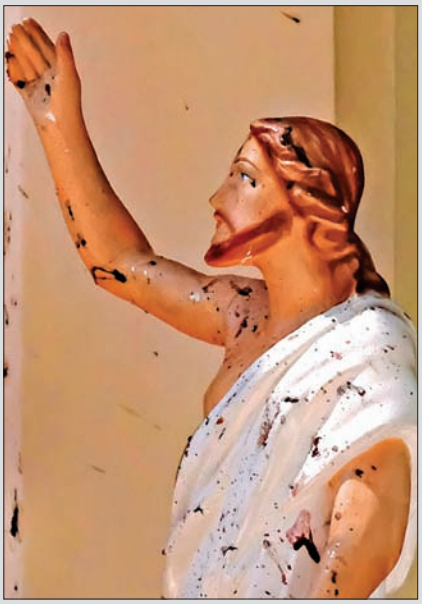

के बाद शांति और स्थिरता की ओर बढ़ रहा श्रीलंका जिस तरह के भीषण आतंकी हमले से दो-चार हुआ वह इस छोटे से देश के साथ पूरी दुनिया के लिए बेहद खौफनाक है एवं बड़ी चुनौती है। ताजा हमलों ने श्रीलंका के दामन पर फिर दाग लगा दिए हैं, फिर से वहां की शांति एवं अमन पर ग्रहण लग गया है। इस अलग तरह की उन्मादी एवं अंधी हिंसा को समझना होगा क्योंकि इसमें अलग तरह की नस्लीय या सांप्रदायिक घृणा के संकेत मिल रहे हैं। ये संकेत श्रीलंका ही नहीं, बल्कि दक्षिण एशिया व दुनिया के लिए भी सोचनीय है।

श्रीलंका के ताजे विस्फोट यह बताते हैं कि ये हमले किसी बड़ी सुनियोजित साजिश का हिस्सा थे। अंतरराष्ट्रीय पर्यटकों से भरे रहने वाले होटलों के साथ जिस तरह चर्चों को खासतौर पर निशाना बनाया गया उससे यह साफ है कि आतंकी ईसाई समुदाय के लोगों को निशाना बनाना चाह रहे थे। इसीलिए चर्चों में तब विस्फोट किए गए जब वहां ईस्टर की विशेष प्रार्थना हो रही थी। अतीत में श्रीलंका के सिंहली बौद्धों का तमिलों और मुसलमानों से तो टकराव रहा है, लेकिन अल्प संख्या वाले ईसाई समुदाय का किसी अन्य समुदाय के साथ कोई बड़ा तनाव नहीं रहा। सवाल है कि इन हमलों एवं विस्फोटों के लिये आखिर श्रीलंका को क्यों चुना गया। यह देश अंतरराष्ट्रीय राजनीति के केंद्र में होने के बजाय बीते कुछ समय से अपनी ही राजनीतिक उठापटक से त्रस्त है। कहीं ऐसा तो नहीं कि इसी उठापटक का फायदा किसी नए-पुराने अतिवादी समूह ने उठा लिया? जो भी हो, यह एक हकीकत है कि जब किसी देश में शासन व्यवस्था सुदृढ़ न हो और राजनीतिक अस्थिरता का अंदेशा हो तो अराजक, अतिवादी और आतंकी ताकतों को सिर उठाने का मौका मिलता है। लेकिन बड़ा सवाल यह भी है कि जीने के अधिकार पर प्रश्नचिन्ह आखिर कब तक लगता रहेगा? कैसी विडम्बना सम्पूर्ण मानवता के अस्तित्व को नकारने पर तूली है, यह कैसा त्रासद एवं डरावना दौर है जिसमें अब युद्ध मैदानों में सैनिकों से नहीं, भीतरघात करके, निदोर्षों की हत्या कर लड़ा जाता है। सीने पर वार नहीं, पीठ में छुरा मारकर लड़ा जाता है। इसका मुकाबला हर स्तर पर हम एक होकर और सजग रहकर ही कर सकते हैं। यह भी तय है कि बिना किसी की गद्दारी के ऐसा संभव नहीं होता है। भारत में विशेषतः कश्मीर में हम बराबर देख रहे हैं कि प्रलोभन देकर कितनों को गुमराह किया गया और किया जा रहा है। पर यह जो घटना हुई है इसका विकराल रूप कई संकेत दे रहा है, उसको समझना है। कई सवाल खड़े कर रहा है, जिसका उत्तर देना है। इसने नागरिकों के संविधान प्रदत्त जीने के अधिकार पर भी प्रश्नचिन्ह लगा दिया। यह बड़ा षड़यंत्र है इसलिए इसका फैलाव भी बड़ा हो सकता है। आतंकवाद अब किसी एक देश की समस्या नहीं रही है, श्रीलंका न्यूजीलैंड के बाद सबसे भयानक हमले का शिकार बना है। न्यूजीलैंड के मुकाबले श्रीलंका में चार गुना ज्यादा लोग मारे गए हैं। घायलों की संख्या भी कहीं अधिक है। श्रीलंका को दहलाने वाले आतंकी हमले भारत के लिए भी चिंता का कारण हैं, क्योंकि एक तो ये ऐसे पड़ोसी देश में हुए जहां हमारे हित निहित हैं और दूसरे ये हमले 1993 में मुंबई में हुए सिलसिलेवार बम धमाकों की याद दिला रहे हैं। विडंबना यह है कि तब से लेकर आज तक विश्व समुदाय आतंकवाद की परिभाषा भी तय नहीं कर पाया है, न ही आतंकवाद से लड़ने का कोई सशक्त माध्यम तय किया गया है। लहूलुहान श्रीलंका एक बार फिर यह बता रहा है कि आतंकवाद मानवता के लिए सबसे बड़ा खतरा बना हुआ है। केवल इतना ही पर्याप्त नहीं कि पूरी दुनिया अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश कर रहे श्रीलंका को दिलासा और सहारा दे, बल्कि यह भी देखे कि किस्म-किस्म के आतंकवाद से कैसे निपटा जाए? ऐसा करते समय इस पर भी ध्यान देना होगा कि आतंकवाद से लड़ाई के तौर-तरीके सफल कम हो रहे हैं, अतिवाद को हवा अधिक दे रहे हैं। यह अतिवाद शांति और सहिष्णुता की बलि लेने के साथ विभिन्न जाति, समुदाय एवं धर्मों के बीच अविश्वास बढ़ा रहा है। त्रासदी यह है कि ऐसे समय भी चीन जैसे देश पाकिस्तान में पल रहे आतंकी सरगना की ढाल बनना पसंद कर रहे हैं। विस्फोट करने वालों और उनके संगठनों को करारा जबाव देने का वक्त है। भारत ने इसकी पहल गतदिनों की, जिसका समूची दुनिया में स्वागत हुआ। एक बार फिर वैसी ही जबावी कार्रवाही जरूरी है। ऐसा नहीं हुआ तो आतंकवादी लोगों का श्रीलंका में किसी न किसी बहाने हिंसा का कारोबार चलता रहेगा, निर्दोष लोगों का खून बहता रहेगा? ■

राजनीतिक दस्तक को अनसुना करना

कांग्रेस के अध्यक्ष राहुल गांधी का अमेठी सीट साथ-साथ सुदूर दक्षिण में केरल की पहाड़ियों के बीच बसे वायनाड में अपनी राजनीतिक किस्मत आजमाने के लिये जाने का निर्णय इनदिनों व्यापक चर्चा में हैं। बड़ा प्रश्न है कि राहुल को यह निर्णय लेने की आवश्यकता क्यों पड़ी? क्या उन्हें अमेठी में अपनी हार की संभावनाएं नजर आने लगी? ऐसी क्या स्थितियां बनी कि उन्हें उत्तर प्रदेश में परिवार की अपनी पारंपरिक सीट से एक तरह किनारा करने का निर्णय लेना पड़ा? कहीं ऐसा भी भ्रम तो नहीं कि राहुल को वर्ष 2019 के चुनाव भारी बहुमत से जीतने की संभावनाएं नजर आने लगी है।

ललित गर्ग

वायनाड से राहुल के चुनाव लड़ने का निर्णय अनेक प्रश्नों को खड़ा कर रहा हैं। यह एक उलझी हुई पहेली ही है कि आखिर वायनाड ही क्यों? आखिर यह एक तथ्य है कि पिछले कुछ समय से स्मृति ईरानी अमेठी में न केवल सक्रिय हैं, विकास के नये रास्ते उन्होंने खोले हैं और इनके आधार पर यह दावा भी कर रही हैं कि इस बार राहुल गांधी के लिए उनकी यह परंपरागत सीट आसान नहीं होने वाली है। न केवल ईरानी बल्कि भाजपा के शीर्ष नेता यह मानकर चल रहे हैं कि अमेठी इस बार उनके खाते में आएगी। किसी भी राष्ट्रीय पार्टी का राष्ट्रीय नेता के लिए यह बहुत सामान्य माना जाता है कि वह उस राज्य से चुनाव लड़े जहां उनके दल की सरकार हो। यह बहुत ही सामान्य चलन है। इसकी वजह यह है कि अपनी पार्टी की सरकार में प्रशासन कई अप्रत्यक्ष तरीकों से सहायक होता है। पंजाब, मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ जैसे चार राज्यों में कांग्रेस की सरकारें हैं। आखिर राहुल गांधी ने इन राज्यों से चुनाव क्यों नहीं लड़ा? क्या उन्हें अपने मुख्यमंत्रियों पर विश्वास नहीं है या फिर उन्हें यह अहसास हो गया है कि मतदाताओं का पहले से ही मोहभंग हो रहा है?

देखने में आ रहा है कि इनदिनों चुनाव की पृष्ठभूमि में हर रोज कोई न कोई ऐसी घटना हो जाती है, जो राजनीति में सभी कुछ अच्छा होने की प्रक्रिया को और दूर ले जाती है। कोई विवाद के घेरे में आता है तो किसी की तरफ शक की सुई घूम जाती है। पूरी चुनावी व्यवस्था में अनुशासन और शांतिपूर्ण चुनाव प्रचार की आदर्श पृष्ठभूमि बन ही नहीं रही है। ऐसे में नई पीढ़ी के बारे में, जो नये भारत का आधार है, कोई नहीं सोच रहा है। अगर कोई प्रयास कर भी रहा है तो वह गर्म तवे पर हथेली रखकर ठण्डा करने के प्रयास जैसा है। जिस पर राजनीति की रोटी तो सिक सकती है पर निर्माण की हथेली जले बिना नहीं रहती। सम्प्रति जो चुनौतियां भारत के लोकतंत्र के सामने हैं, वह सत्तर सालों से मिल रही चुनौतियों से भिन्न हैं। अतः इसका मुकबला भी भिन्न तरीके से करना होगा, पर आधार लोकतांत्रिक मूल्यों के सिवाय दूसरा कोई हो ही नहीं सकता। यह बात राहुल और उनकी पार्टी को समझनी होगी।

राहुल गांधी के वायनाड से भी चुनाव लड़ने के फैसले का केवल एक ही कारण है और वह यह कि इस संसदीय क्षेत्र में करीब आधे मतदाता मुस्लिम हैं। वहां मुसलमानों का एक तबका भाकपा के साथ हैं और भाकपा प्रत्याशी भी मुस्लिम हैं, लेकिन केरल और खासतौर पर वायनाड में अधिकांश मुसलमान मुस्लिम लीग को वोट देते हैं। लेकिन यहां मुसलमानों एवं क्रिश्चियन समुदाय के वोटों की बहुलता के कारण यह सीट कांग्रेस के लिये सुरक्षित सीट है। ज्ञात हो 2009 एवं 2014 में 15वीं एवं 16वीं लोकसभा में यह सीट कांग्रेस के खाते में गई थी। समूचे राष्ट्र में क्या यही एक ऐसी सीट है जिस पर कांग्रेस को उनके अध्यक्ष की जीत सुनिश्चित दिखाई दी? इससे तो चुनाव पूर्व ही कांग्रेस के धरातल का पता लग जाता है।

राष्ट्रीय अध्यक्ष होते हुए किसी चुनौतीपूर्ण स्थान का चयन क्यों नहीं किया?

लोकतन्त्र में दो स्थानों पर चुनाव लड़ने का प्रचलन रहा है। इसलिये राहुल गांधी यदि दो स्थानों से चुनाव लड़ते हैं तो यह कोई गलत नहीं है। प्रश्न उस सुरक्षित एवं निष्कंटक स्थान का है, जिसका राहुल ने चयन किया है। प्रश्न यह भी है कि वे देश की सबसे पुरानी एवं सशक्त पार्टी के राष्ट्रीय अध्यक्ष होते हुए किसी चुनौतीपूर्ण स्थान का चयन क्यों नहीं किया? जहां तक दो स्थान से चुनाव लड़ने का प्रश्न है तो 2014 में प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने भी दो स्थानों बडोदरा और बनारस से चुनाव लड़ा था और वह दोनों स्थानों से विजयी रहे थे। श्रीमती सोनिया गांधी ने भी कर्नाटक के बेल्लारी और रायबरेली से चुनाव लड़ा था वह भी दोनों स्थानों से विजयी रही थीं। भाजपा के लालकृष्ण अडवानी ने भी गांधीनगर और नई दिल्ली से चुनाव लड़ा था वह भी दोनों स्थानों से विजयी रहे थे। दरअसल यह उस वक्त में विजयी राजनीतिज्ञ की पार्टी और उसकी लोकप्रियता का प्रतीक होता है कि वह एक की जगह दो स्थानों से विजयी रहा। पराजित होने पर इसकी उल्टी बात साबित होती। अतः हम चुनावी जुमलों से यह तय नहीं कर सकते कि किस नेता की लोकप्रियता कितनी है। सत्ता और विपक्ष का अपना-अपना चुनावी गणित और समीकरण होते हैं जिसके आधार पर वे अपनी रणनीति तय करते हैं। लेकिन राष्ट्र की एकता एवं उसका सशक्तीकरण जिन लोकतांत्रिक मूल्यों एवं राष्ट्रीयता के ताने-बाने से बना है, वह कभी भी उधड़ सकता है। आवश्यकता है राजनीतिक जिजीविषा एवं मूल्यों की। आवश्यकता है साफ-सुथरी सोच की, साफ सुथरे निर्णय की, साफ-सुथरे राजनीतिक चरित्र की। कितना अच्छा होता कि राहुल किसी चुनौती को स्वीकारते, राजनीतिक पुरुषार्थ का सन्देश देते ताकि जड़ताओं को तोड़कर राजनीतिक चरित्र की उजली संभावनाएं उद्घाटित होती।

अमेठी की उपेक्षा के सवाल भी कम नहीं है, जिनसे राहुल गांधी को पहले भी दो-चार होना पड़ा है। हाल में ऐसे ही सवालों से कांग्रेस महासचिव और पूर्वी उत्तर प्रदेश की प्रभारी बनीं प्रियंका गांधी वाड्रा को भी दो-चार होना पड़ा। हैरत नहीं कि इसके बाद ही कांग्रेस ने यह तय किया हो कि राहुल गांधी को अमेठी के साथ अन्य कहीं से भी लड़ना चाहिए। इसमें कोई हर्ज नहीं, लेकिन राहुल को इस सवाल का जवाब तो देना ही होगा कि अमेठी में अपेक्षित विकास क्यों नहीं हो सका? सच तो यह है कि अमेठी के साथ रायबरेली भी इस सवाल का जवाब मांग रही है। उनका अमेठी से पलायन वर्ष 2019 के आम चुनाव में कांग्रेस के खाते में दर्ज होने वाली पहली हार की तरह है। यहां यह स्मरण करना भी उल्लेखनीय होगा कि अमेठी में राहुल गांधी की जीत सुनिश्चित करने के लिए प्रमुख विपक्षी राजनीतिक दलों ने वह सब किया जो वे कर सकते थे। बसपा प्रमुख मायावती और समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष अखिलेश यादव ने पहले ही एलान कर दिया था कि वे अमेठी में अपना प्रत्याशी नहीं उतारेंगे, लेकिन लोकतंत्र में मतदाता ही सर्वेसर्वा होता है या यूं कहें जन-जुड़ाव ही निर्णायक हो जाता है तो बड़े से बड़े गणितीय आकलन धरे के धरे रह जाते हैं। अमेठी के मतदाता एक लंबे अरसे से किए जा रहे थोथे वादों एवं आश्वासनों से अब उकता गए हैं और विकास के मोर्चे पर पिछड़ने को लेकर भी वे कुपित हो रहे हैं। इसलिये कांग्रेस अमेठी को अपनी बहुत मजबूत सीट नहीं मानती है और यही राय उसके नेताओं की भी है। अब जब चुनाव प्रचार अभियान गति पकड़ रहा है तो हम दीवार पर लिखी इबारत को भी स्पष्ट रूप से पढ़ सकते हैं। जमीनी हकीकत तो यही बयान कर रही है कि जनसमर्थन का ज्वार प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी और उनके विकास के मुद्दे के पक्ष में बढ़ रहा है। इन स्थितियों में वायनाड का निर्णय कांग्रेस को मजबूती देने की बजाय कमजोर ही करेगा।

वायनाड से गांधी के चुनाव लड़ने के निर्णय से विपक्षी महागठबंधन में भी दरार पड़ी है। क्योंकि वहां से चुनाव लड़ने से वामपंथी दलों को भी करारा झटका लगा है जबकि राहुल को समर्थन देने के लिए वामपंथी दलों से जो भी बन पड़ा, उन्होंने किया। वामपंथी दलों को इसका जरा भी अंदाजा नहीं था कि उनका राहुल समर्थन का उन्हें यह सिला मिलेगा कि राहुल गांधी उनके खिलाफ ही मोर्चा खोल लेंगे। यह वही राहुल गांधी हैं जो सभी साथी राजनीतिक दलों के बीच यह कहते हुए घूम रहे थे कि भाजपा को हराने के लिए वे सभी आपसी मतभेद भुलाकर उसे सत्ता से बाहर करने में सहायक बनें। यह दलील दमदार नहीं दिखती कि वायनाड से भी राहुल गांधी के चुनाव लड़ने से दक्षिण भारत में कांग्रेस को मजबूती मिलेगी, क्योंकि अगर ऐसा है तो उन्हें तमिलनाडु या फिर आंध्र प्रदेश अथवा तेलंगाना से चुनाव लड़ना चाहिए, जहां कांग्रेस कहीं अधिक कमजोर है। यह भी कम अजीब नहीं कि राहुल गांधी एक ओर भाजपा को चुनौती देते दिख रहे और दूसरी ओर ऐसे राज्य में अपने लिए सुरक्षित सीट खोज रहे जहां भाजपा कोई बड़ी राजनीतिक ताकत नहीं मानी जाती। यदि कोई इस नतीजे पर पहुंचे कि राहुल गांधी भाजपा की तेज-तर्रार नेता स्मृति ईरानी की चुनौती का सामना करने में कठिनाई महसूस कर रहे हैं तो यह राहुल की कमजोरी या निराशा है, न कि स्मृति ईरानी का कोई दोष। आम जनता को यही संदेश जा रहा है कि कांग्रेस अध्यक्ष अपने परंपरागत निर्वाचन क्षेत्र पर भरोसा नहीं कर पा रहे हैं। ■

जरूरत है राजनीतिक परिष्कार की

इन आम चुनावों में बड़े विरोधाभास दिख रहे हैं। एक बड़ा विरोधाभास है राजनीतिक घोषणाओं एवं आश्वासनों का, जो तमाम अंधेरों के बीच चांद उगाने की कोशिशें कर रहा है। इन सबके बीच आप और हम उन चार अंधों को मिले हाथी की तरह है, जो अपने मापदंडों के साथ अपना-अपना सच परखने में जुटे हैं कि इर्द-गिर्द जो घट रहा है, वह सही है या गलत? अनेक प्रश्न जहन में उभर रहे हैं। सबसे बड़ा प्रश्न तो यही है कि आज भी भारत में राष्ट्रीय भावना और देशभक्ति की भावना को मानकर नहीं चला जा सकता। देश आज जितना विभाजित और संकीर्णता ग्रस्त है उतना शायद ही कभी रहा हो। अगर हम अपनी तुलना उन देशों से करें जहां आजादी संघर्ष के बाद हासिल की गई तो हम देख सकेंगे कि वहां बार-बार देशभक्ति के लिये सरकार को आह्वान नहीं करना पड़ता और जनता स्वयं सरकार की देशभक्ति को शंका की दृष्टि से नहीं देखती। यहां तो सेना की कार्रवाही पर ही प्रश्न खडे किये जा रहे हैं, सेना को राजनीति से जोड़कर देखा जा रहा है, यह न केवल विरोधाभास है बल्कि विडम्बना है।

मधुसूदन भट्ट

राजनीतिक प्रदूषण एवं उसका आपराधिक चरित्र देश के समक्ष गम्भीर समस्या बन चुका है। राजनीति की बन चुकी मानसिकता में आचरण की पैदा हुई बुराइयों ने पूरे तंत्र और पूरी व्यवस्था को प्रदूषित कर दिया है। स्वहित और स्वयं की प्रशंसा में ही लोकहित है, यह सोच हमारी राजनीति में घर कर चुकी है। यह रोग राजनीति की वृत्ति को इस तरह जकड़ रहा है कि हर दल और नेता लोक के बजाए स्वयं के लिए सब कुछ कर रहा है। भ्रष्ट आचरण और व्यवहार अब हमें पीड़ा नहीं देता। सबने अपने-अपने निजी सिद्धांत बना रखे हैं, भ्रष्टाचार की परिभाषा नई बना रखी है।

राजनीति करने वाले सामाजिक उत्थान के लिए काम नहीं करते बल्कि उनके सामने बहुत संकीर्ण मंजिल है, वोटों की। ऐसी रणनीति अपनानी, जो उन्हें बार-बार सत्ता दिलवा सके, ही सर्वोपरि है। वोट की राजनीति और सही रूप में सामाजिक उत्थान की नीति, दोनों विपरीत ध्रुव हैं। एक राष्ट्र को संगठित करती है, दूसरी विघटित।

राजनीति शब्द को सुनते ही कानों में अंगुलियां डालने वालों को शायद मालूम नहीं कि यह उनके रक्त में ही नहीं, सांसों में समायी हुई है, जिन्दगी उसी से चलती है, हम उसी से संचालित है। हम जो हर दिन आंख खोलते और बन्द करते हुए चैबीस घंटे की जिन्दगी पूरी करते हैं, उसमें कुछ भी राजनीति से अछूता नहीं है। हम और हमारा जीवन राजनीति में लिप्त है और वही राजनीति आम चुनावों में यहां एक अलग तरह का माहौल पैदा कर रही है जिसमें राजनीतिक दल और राजनेता एक दूसरे को मयार्दाएं सिखा रहे हैं, एक तरह से राजनीति में दूसरे को मयार्दा का पाठ पढ़ाने का खेल चल रहा है। जबकि स्वयं की सीमा और संयम किसी को भी याद नहीं है। सिर्फ दूसरों की कमियों को गिनाना एक खतरनाक खेल है, अपनी अनदेखी करने की यह आदत भारतीय राजनीति की एक ऐसी विडंबना बनती जा रही है जो न केवल राजनीतिक दलों के लिए घातक होगी बल्कि राष्ट्र को भी कमजोर बनाएगी। मयार्दाएं और संयम सबके लिए समान है और यही आदर्श स्थिति भी है।

स्पष्ट है कि इन आम चुनावों में राजनीति के इस खेल में हर कोई दूसरे को यह दिखाने-समझाने में लगा है कि वह अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर रहा है। कोई यह नहीं देखना चाहता कि उसका स्वयं का पैर कहां है। यही नहीं, यह ऐसा खेल है जिसमें हर खिलाड़ी दूसरे की सीमा अपने ढंग से तय करता है। कोशिश यह दिखाने की रहती है कि दूसरा गलत खेल रहा है। अपने लिए तो सभी यह मानकर चलते हैं कि उनसे गलती हो ही नहीं सकती।

हमारी राजनीति के इस चरित्र को समझने की जरूरत सिर्फ राजनेताओं को ही नहीं है, सामान्य नागरिकों के लिए भी यह समझना जरूरी है कि वह इस खेल को समझें। संभवत भारत के लोग इस खेल को समझने के साथ-साथ एक नये जिम्मेदारीपूर्ण अहसास को भी समझ रहे हैं। यह शुभ लक्षण है कि भारत में यह एहसास उभर रहा है कि तथाकथित राजनेता या ऊपर से आच्छादित कुछ लोगों की प्रगति देश में आनन्द और शांति के लिये पर्याप्त नहीं है, इसलिये नरेन्द्र मोदी जैसे संवेदनशील और स्वाभिमानी व्यक्तियों में राजनीति का एक नया एहसास अंकुरित हो रहा है जिसमें संघर्ष और निर्माण के तत्व हैं। इसमें संदेह नहीं कि किसी भी व्यवस्था में आचरण की सीमाएं हुआ करती हैं। व्यवस्था में रहने वालों को इन सीमाओं का आदर करना सीखना चाहिए, तभी व्यवस्था बनी रह सकती है। हमारे राजनेता एक-दूसरे को अपनी-अपनी मयार्दा का पालन करने की सलाह दे रहे हैं, तो इसमें कहीं कुछ गलत नहीं है। गलत तो यह बात है कि हर कोई दूसरे के आचरण पर निगाह रखना चाहता है, खुद को देखना नहीं चाहता। इससे अराजकता की ऐसी स्थिति बनती है जिसमें न साफ दिख पाता है और न ही कुछ साफ समझ आता है।

> **राजनीति को शैतानों की शरणस्थली मानना एक शर्मनाक विवशता है। लेकिन कतई जरूरी नहीं कि इस विवशता को हम हमेशा ढोते ही रहें। अपराधियों को टिकट देना, उन्हें जीता कर संसद में लाना, उनकी हरकतों को नजर अंदाज करना आदि राजनीतिक दलों की विवशता हो सकती है, लेकिन देश के जागरूक एवं जिम्मेदार मतदाता की नहीं?**

इसमें कोई संदेह नहीं कि हर एक को अपनी मयार्दा में रहना चाहिए। राजनीतिक परिपक्वता और समय का तकाजा है कि हम दूसरों की ही नहीं अपनी मयार्दाएं भी समझें और उसके अनुरूप आचरण करें। यह भी जरूरी है कि हम अपने को दूसरों से अधिक उजला समझने की प्रवृत्ति से भी बचें। हमें यह भी एहसास होना चाहिए कि जब हम किसी की ओर एक उंगली उठाते हैं तो शेष उंगलियां हमारी स्वयं की ओर उठती हैं। हम स्वयं को दर्पण में देखने की आदत डालें। दूसरों को दागी बताने से पहले अपने दागों को पहचानें।

पवित्रता का आदि बिन्दु है स्वस्थता। पवित्रता निरावरण होती है। आज राजनीति को पवित्रता की जरूरत है। पवित्रता की भूमिका निर्मित करने के लिए पूर्व भूमिका है आत्मनिरीक्षण। किस सीमा तक विकारों के पर्यावरण से हमारा व्यक्तित्व प्रदूषित है? यह जानकर ही हम विकारों का परिष्कार कर सकते हैं। परिष्कार के लिए खुद से बड़ा कोई खुदा नहीं होता। महात्मा गांधी के शब्दों में-ह्यह्यपवित्रता की साधना के लिए जरूरी है बुरा मत देखो, बुरा मत बोलो, बुरा मत सुनो।ह्लह्ल भगवान महावीर ने संयमपूर्वक चर्या को जरूरी माना है। पवित्रता का सच्चा आईना है व्यक्ति का मन, विचार, चिंतन और कर्म। इन आम चुनावों की एक बड़ी विडम्बना है कि इसमें कोई भी कद्दावर राजनेताओं नहीं है जो यह सीख दे सकें हैं कि सब अपने-अपने आईने में स्वयं को देखें और अपनी कमियों का परिष्कार करें। स्वयं के द्वारा स्वयं का दर्शन ही वास्तविक राजनीति का हार्द है। नैतिकता की मांग है कि सत्ता के लालच अथवा राजनीतिक स्वार्थ के लिए हकदार का, गुणवंत का, श्रेष्ठता का हक नहीं छीना जाए। राजनीति को शैतानों की शरणस्थली मानना एक शर्मनाक विवशता है। लेकिन कतई जरूरी नहीं कि इस विवशता को हम हमेशा ढोते ही रहें। अपराधियों को टिकट देना, उन्हें जीता कर संसद में लाना, उनकी हरकतों को नजर अंदाज करना आदि राजनीतिक दलों की विवशता हो सकती है, लेकिन देश के जागरूक एवं जिम्मेदार मतदाता की नहीं? ■

इस चुनाव में क्यों नहीं सुनने को मिल रहे नारे...

लोकसभा चुनाव के पहले दौर के लिए संपन्न मतदान हो चुका है पर इस बार अभी तक कोई नये खास नारे सामने नहीं आये हैं। इस बार चुटीले और तुरंत अपनी तरफ ध्यान आकर्षित करने वाले नारों का कुल जमा अभाव दिखाई दे रहा है। नारे ही तो चुनावों की जान रहे हैं। नारों के बिना चुनाव का आनंद आधा-अधूरा सा ही रहता है। पिछले 2014 में भाजपा का नारा था- 'मोदी जी आएंगे, अच्छे दिन लाएंगे'। तब भाजपा का एक और चर्चित नारा भी था- अबकी बार मोदी सरकार'। भाजपा ने 2019 में फिर लगभग इसी नारे को आगे बढ़ाया है। इस बार का नारा है- 'फिर एकबार, मोदी सरकार'। इस बार भाजपा मोदी है तो मुमकिन है और भारत नया बनाने दो, मोदी को फिर से आने दो जैसे नारे लेकर भी आई है।

सौरभ सिंह

माकपा ने देश को मोदी सरकार की नीतियों से मुक्त कराने की रणनीति को लोकसभा चुनाव में प्रचार अभियान के केंद्र में रखते हुए इस बार, मोदी बेरोजगार नारे को प्रचार का मूलमंत्र बनाया है। पर ये नारे कतई पर्याप्त नहीं माने जा सकते हैं। नारों से चुनाव का माहौल बनता है। एक ऐसा भी दौर था जब सभी दलों के कार्यकर्ता अपनी रैलियों में अपने दलों के नारे लगाते थे। उन्हें ही दिवारों पर नारे लिखकर रंगने के लिए कहा जाता था । उन्हीं नारों के साथ दिवारों पर पोस्टर भी चिपकाए जाते थे। हालांकि दीवारों को रंगने या पोस्टर लगाने का समय अब तो जा चुका है। परनए-नए नारों को बनाने से कौन रोक रहा है, या कानूनन रोक सकता है? बहरहाल, 2019 का लोकसभा चुनाव तो नारों के लिहाज से खासा कमजोर ही माना जाएगा।

दरअसल नए-नए नारों के लिहाज से आपात काल के बाद 1977 में हुआ आम चुनाव याद रखा जाएगा। तब सन सतहत्तर की ललकार, दिल्ली में जनता सरकार, संपूर्ण क्रांति का नारा है, भावी इतिहास हमारा है, फांसी का फंदा टूटेगा, जार्ज हमारा छूटेगा, नसबंदी के तीन दलाल, इंदिरा, संजय बंसीलाल, बच्चे बच्चे की जुबान पर थे। जनता पार्टी सरकार कलह क्लेश की शिकार होने के कारण गिर गई थी। इसलिए 1980 में फिर से लोकसभा चुनाव हुआ था। तब कांग्रेस का एक नारा - आधी रोटी खाएंगे, इंदिरा जी को लाएंगे। इसी के साथ और इंदिरा लाओ, देश बचाओ खूब हिट हो गया था। 1984 में इंदिरा गांधी की हत्या के बाद जब तक सूरज चांद रहेगा, इंदिराजी तेरा नाम रहेगा, जैसेनारे ने पूरे देश में सहानुभूति लहर पैदा की, और कांग्रेस को बड़ी भारी जीत हासिल हुई।1991 में राजीव गांधी की हत्या के बाद राजीव तेरा ये बलिदान याद करेगा हिंदुस्तान खूब गूंजा और इसका असर भी वोटिंग पर देखा गया।

यदि बात 1952 में हुए पहले आम चुनाव की करें तो उसमें कोई खास नारे सामने नहीं आए थे। वो स्वतंत्र भारत का पहला आम चुनाव था। देश पहली बार मतदान करके अपनी सरकार को चुन रहा था। पर 1957 के आम चुनाव से नारों की ताकत सामने आने लगी। दूसरे आम चुनाव में गरीबी को केन्द्र में रखकर नारे सामने आए। तब पंडित जवाहर लाल नेहरू ने मेरठ की एक सभा में देश की गरीबी और पिछड़ेपन का जिक्र करते हुए नारा दिया था- हमें छलांग मारनी है। उनकी बेटी इंदिरा गांधी ने 1971 के आम चुनावों के दौरान अपना बहुर्चित गरीबी हटाओ का नारा दिया। कांग्रेस ने उस चुनाव में दो दर्जन से अधिक नारे दिए थे पर गरीबी हटाओ वाले नारे ने शेष

शास्त्री जी के नारे को संशोधित कर अटल बिहारी वाजपेयी ने 1998 में पोखरण विस्फोट के बाद नारा दिया था, ह्यजय जवान,जय किसान, जय विज्ञान। बहरहाल अभी लोकसभा चुनाव को सम्पन्न होने में वक्त है। इसलिए उम्मीद कीजिए कि देश की जनता को कुछ फड़कते हुए नारे सुनने को मिलेंगे। ये ही नारे तो जनता को किसी दलविशेष की तरफ खींचते हैं।

नारों को पीछे छोड़ दिया था। तब इंदिरा गांधी ने कहा था- वे कहते हैं इंदिरा हटाओ, इंदिरा कहती है गरीबी हटाओः अब आप ही चुनिए इमरजेंसी के बाद 1977 में हुए चुनाव में विपक्ष का नारा था इंदिरा हटाओ, देश बचाओ। अब 50 की उम्र पार कर गई पीढ़ियों को याद होगा कि1980 के चुनाव में कांग्रेस ने समय और परिस्थितियों के अनुसार नया नारा तैयार किया- सरकार वो चुनें, जो चल सके।

भाजपा के पूर्व अवतार जनसंघ ने भी राजनीति में कुछ अच्छे नारों का योगदान दिया है। इनमें से 1967 के आम चुनाब में पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने एक प्रमुख नारा दिया था हर हाथ को काम, हर खेत को पानी, हर रोगी को दवाई, हर बच्चे को पढाई जनसंघ की निशानी। भाजपा का 2004 लोकसभा चुनाव के समय दिया गया नारा इंडिया शाइनिंग चला तो खूब पर जमीन पर इसका असर नहीं हुआ था। उस चुनाव में यूपीए ने भाजपा को अप्रत्याशित रूप से हरा दिया था। भाजपा का 1998 के लोकसभा चुनाव के समय दिया गया नारा अबकी बारी, अटल बिहारी ने देशभर में धूम मचाई थी। एक और नारा जो इस दौरान काफी चर्चित हुआ था,राज तिलक की करो तैयारी, आ रहे हैं अटल बिहारी। 1991 में हुए चुनाव में राजीव गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस ने फिर से स्थायित्व को अपना हथियार बनाने की कोशिश की। कांग्रेस ने नारा दिया- स्थायित्व को वोट दें, कांग्रेस को वोट दें। यह चुनाव मंडल आयोग की सिफारिशें लागू होने के बाद हो रहा था। देश ने उसके कारण पैदा हुई हालात को झेला था। इसलिए कांग्रेस के नारे पर उन परिस्थितियों का भी असर पड़ा। कांग्रेस का एक नारा था- ना जात पर, ना पात पर, स्थिरता की बात पर, मुहर लगेगी हाथ पर। उस दौरान भाजपा ने नारा दिया था- सबको परखा, हमको परखो। उसका दूसरा नारा था- राम, रोटी और स्थिरता। यह राम मंदिर आंदोलन का असर था। बहुजन समाज पार्टी के नारे-तिलक,तराजू और तलवार, इनको मारों जूते चारने खासी कटुता भी पैदा की थी। हालांकि बाद के दौर में बसपा ने इस नारे को छोड़ एक नए नारे को अपनाया-हाथी नहीं गणेश है, ब्रहमा,विष्णु महेश है।लाठी उठावन,तेल पिलावन,भाजपा भगावन। लालू प्रसाद ने इसे भाजपा के खिलाफ खूब इस्तेमाल किया। पर याद रखिए कि नारे सिर्फ चुनावों के वक्त ही नहीं आते या उछाले जाते है। कुछ नारे देश हित में सामने आते हैं। उदाहरण के रूप में 1965 में पाकिस्तान के खिलाफ जंग के बाद लालबहादुर शास्त्री का कालजयी नारा था - जय किसान, जय जवान। शास्त्री जी के नारे को संशोधित कर अटल बिहारी वाजपेयी ने 1998 में पोखरण विस्फोट के बाद नारा दिया था, जय जवान,जय किसान, जय विज्ञान। बहरहाल अभी लोकसभा चुनाव को सम्पन्न होने में वक्त है। इसलिए उम्मीद कीजिए कि देश की जनता को कुछ फड़कते हुए नारे सुनने को मिलेंगे। ये ही नारे तो जनता को किसी दलविशेष की तरफ खींचते हैं। ये चुनावों का अभिन्न अंग हैं। नारों की समृद्ध परंपरा कभी खत्म नहीं होनी चाहिए। ■

सांसद बनने की फिराक में

सेना को बलात्कारी कहने वाला कन्हैया

कन्हैया कुमार अब बिहार की बेगूसराय सीट से लोकसभा चुनाव लड़ रहा है। वो भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (भाकपा) का उम्मीदवार है। यह वही कन्हैया कुमार है, भारतीय सेना को बलात्कारी कहने से भी पीछे नहीं हटता। वो बार-बार कहता रहा है कि भारतीय सेना कश्मीर में बलात्कारों में लिप्त है। जरा सोचिए कि कन्हैया कुमार को अगर रामधारी सिंह 'दिनकर' की धरती बेगूसराय लोकसभा में निर्वाचित करके भेजती है तो राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर की आत्मा पर क्या गुजरेगी। बाकी किसी को जिताओ, एतराज नहीं, पर वतन के रखवालों के खिलाफ शर्मनाक बयानबाजी करने वाले कन्हैया को जिताना तो लोकतान्त्रिक अपराध होगा।

बृजेश शर्मा

भारतीय सेना पर कश्मीर में रेप जैसा जघन्य आरोप लगाने वाले कन्हैया कुमार के आरोप को देखने के लिए आप यू ट्यूब का सहारा भी ले सकते हैं। यानी वो यह तो कह ही नहीं कह सकता कि उसने भारतीय सेना पर कभी इतना गंभीर आरोप नहीं लगाया। उससे यह पूछा जाना चाहिए कि आखिर वह किस आधार पर सरहदों की निगाहबानी करने वाली भारतीय सेना पर आरोप लगा रहा है? उसके पास अपने आरोपों को साबित करने के किस तरह के पुख्ता प्रमाण हैं? अब कन्हैया से बेगूसराय के मतदाताओं को पूछना चाहिए कि उसने भारतीय सेना पर कश्मीर में बलात्कार संबंधी आरोप किस आधार पर लगाए थे? इस सवाल का संतोषजनक उत्तर मिले बिना बेगूसराय के जागरूक मतदाताओं को कन्हैया का पीछा छोड़ना नहीं चाहिए। भारतीय सेना पर मिथ्या आरोप लगाने वाले कन्हैया कुमार ने सेना पर आरोप तो लगा दिए, पर उसे तब सेना का अदम्य साहस और कर्तव्य परायणता दिखाई नहीं दी, जब सेना कश्मीर से लेकर केरल में बाढ़ से त्राहि-त्राहि करती जनता को सुरक्षित स्थानों पर पहुंचा रही थी। कन्हैया कुमार को ये भी याद नहीं रहा जब भारतीय वायुसेना केदारनाथ में भीषण प्राकृतिक आपदा के वक्त लोगों को सुरक्षित स्थानों में पहंचा रही थी। उस दौरानगौरीकुड में एयर फोर्स का एक हेलीकाप्टर गिर भी गया था। उस दुर्घटना के शिकार लोगों में वायुसेना के चार अधिकारी समेत पांच कर्मी शामिल थे। वह हेलीकॉप्टर पहाड़ों में फंसे लोगों को निकालने के लिए आठ दिनों से राहत कार्य में जुटा था, जो मौसम खराब होने की वजह से दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। क्या कन्हैया कुमार ने उन मृतकों के परिजनों से किसी तरह की संवेदना जताई थी? कन्हैया कुमार को कभी सेना यासीआरपीएफ के जवानों की शहादत की प्रशस्ति करने का वक्त नहीं मिलता। उसने पुलवामा में शहीद हुए जवानों के परिवार वालों के प्रति भी अभी तक कोई सहानुभूति नहीं जताई।

कन्हैया कुमार जब ऐसे आपत्तिजनक बयान देते हैं तो वह किन मंचों का इस्तेमाल करते हैं? देशविरोधी अलगाववादिय? और माओवादी तथाकथित प्रगतिशीलों का ही न? फिर उसके बयान का जहरीला इस्तेमाल करने वाली ताकतें कौन सी हैं? कन्हैया कुमार अपने को उस विचारधारा से जुड़ा हुआ बताता है, जो जाति पर यकीन नहीं करती। वहां पर जातिहीन समाज का सपना दिखाया जाता है। तो फिर कन्हैया भूमिहार बहुल बेगूसराय से ही क्यों खड़े हैं? इसलिए न कि उन्हें भूमिहार मत पाने की लालसा हैं। कन्हैया कुमार की राजनीति की बानगी भारत तेरे टुकड़े होंगे, इंशा अल्लाह इंशा अल्लाह वाली ही तो है। याद रखिए कि कन्हैया पर अभी देश विरोधी नारेबाजी के मामले में केस चल रहा है। दिल्ली पुलिस ने राष्ट्रद्रोह के केस की अनुमति मांगी है, जिसे केजरीवाल जी ने लटका कर रखा हुआ है। यह हर एक सच्चे देशवासी की चाहत है कि अगली लोकसभा में पढ़े-लिखे शिक्षित लोग ही लोकसभा में निर्वाचित होकर आएं। वे प्रगतिशील विचारधारा से हों, पर देश यह भी चाहता है कि वे कन्हैया कुमार जैसे राष्ट्रद्रोही तो न हों जो देश को तोड़ने का आहवान करते हैं। कन्हैया कुमार देश विरोधी ताकतों के हाथों में खेलने लगे हैं। याद रखिए कि कन्हैया कुमार ने 1984 में श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के बाद दिल्ली में भड़के दिल-दहलाने वाले सिख विरोधी दंगों के लिए कांग्रेस को क्लीन चिट दे दी थी। एक बार राहुल गांधी से मिलने के बाद कन्हैया कुमार तो यह कहने लगे थे कि 1984 के दंगे भीड़ के उन्माद के कारण भड़के। वे एक तरह से कांग्रेस को प्रमाणपत्र दे रहे हैं कि उसकी 1984 के दंगों में कोई भूमिका नहीं थी। क्या कांग्रेस के पूर्व सांसद सज्जन कुमार को 1984 के दंगों को भड़काने में उम्र कैद होने के बाद भी वे यही कहेंगे कि उस भयावह दंगों में कांग्रेस की कोई भूमिका नहीं थी? सज्जन कुमार के अलावा और भी कई कांग्रेसियों पर 1984 के दंगे भड़काने के आरोप सिद्ध हो चुके हैं। ये सभी दिल्ली की मंडोली जेल में जीवनभर में रहने वाले हैं। इंदिरा गांधी की मृत्यु के बाद भड़के दंगों के समय केन्द्र में कांग्रेस की सरकार थी। उसके मुखिया राजीव गांधी ही थे। क्या कन्हैया इन सारे तथ्यों से अनभिज्ञ हैं?

दरअसलकन्हैया कुमार उन लोगों में से हैं, जिन्हें विशुद्ध रूप से सोशल मीडिया ने क्रिएट किया है। उन्होंने कभी जनता के बीच कभी कोई काम नहीं किया है। उनकी सारी क्रांति जवाहरलाल नेहरु यूनिवर्सिटी कैंपस से शुरू होकर जंतर मंतर या किसी खबरिया टीवी चैनल पर आकर जाकर खत्म हो जाती है। फिर भी उन्हें महान बताने का सिलसिला चलता रहा है। कांग्रेस के नेता शशि थरूर ने तो कन्हैया कुमार में भगत सिंह का अक्स ही देख लिया था। क्या कभी कन्हैया ने अपनी लोकसभा सीट के अंतर्गत आने वाले सभी गांवों कोदेखा है? बहुत अच्छा होगा कि उनके हक में भारत तेरे टुकड़े होंगे... गैंग के बाकी सदस्य जैसे ऊमर खालिद, शेहला राशिद, अनिर्बान भी बेगसराय में आकर प्रचार करें। बेगुसराय की देशभक्त जनता उनका पर्याप्त सत्कार करेगी। यही नहीं, बेगूसराय में चुनाव की तिथि नजदीक आते ही कन्हैया ने भाजपा प्रत्याशी गिरिराज सिंह पर एक बेहद बचकाना आरोप लगान चालू कर दिया है। वे कह रहे हैं कि गिरिराज सिंह मंदिर में जाकर वोट मांग रहे हैं। वे मानते हैं कि इससे आदर्श आचार संहिता का उल्लंघन हो रहा है। तो क्या भारत में चुनाव प्रचार के दौरान मंदिर- मस्जिद जाना भी अपराध माना जाएगा? अगर ऐसा है तो वे राहुल-प्रियंका के मंदिर-मस्जिद प्रवासों पर क्यों चुप हैं? ■

यही नहीं, बेगूसराय में चुनाव की तिथि नजदीक आते ही कन्हैया ने भाजपा प्रत्याशी गिरिराज सिंह पर एक बेहद बचकाना आरोप लगान चालू कर दिया है। वे कह रहे हैं कि गिरिराज सिंह मंदिर में जाकर वोट मांग रहे हैं। वे मानते हैं कि इससे आदर्श आचार संहिता का उल्लंघन हो रहा है। तो क्या भारत में चुनाव प्रचार के दौरान मंदिर- मस्जिद जाना भी अपराध माना जाएगा? अगर ऐसा है तो वे राहुल-प्रियंका के मंदिर-मस्जिद प्रवासों पर क्यों चुप हैं?

दागी उम्मीदवारों को नकारना होगा

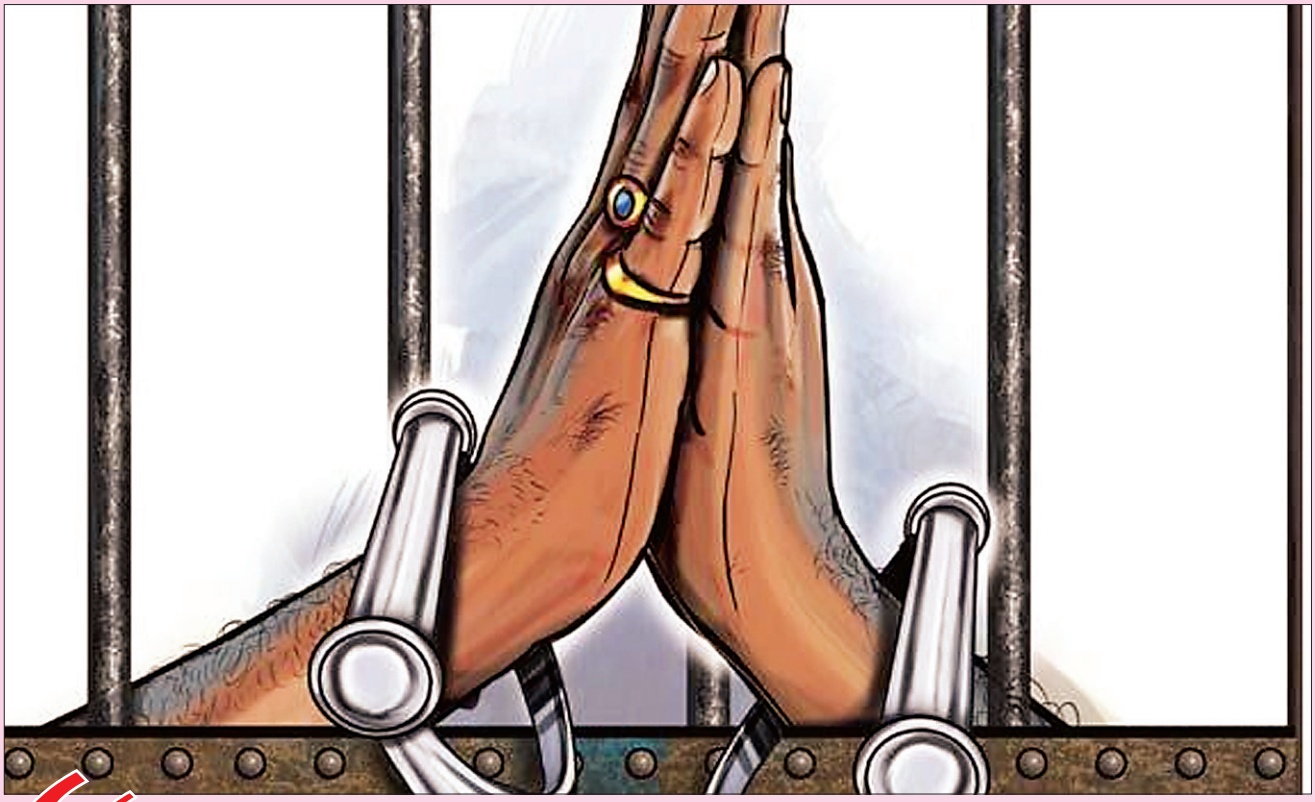

सत्रहवीं लोकसभा के महासंग्राम में दागी एवं आपराधिक पृष्ठभूमि के नेताओं को चुनाव लड़ने से रोकने की कोशिशें एक बार फिर नाकाम हो रही हैं, नतीजन इन चुनावों में बड़ी संख्या में ऐसे उम्मीदवार मैदान में हैं। सुप्रीम कोर्ट एवं चुनाव आयोग जैसी संस्थाएं तक राजनीति के इस अपराधीकरण को रोक पाने में एक तरह से बेबस एवं लाचार साबित हुई हैं। यह त्रासद एवं विडम्बनापूर्ण स्थिति अहसास कराती है कि आखिर लोकतंत्र के अस्तित्व एवं अस्मिता को संरक्षण देने के लिये इन स्थितियों को कब और कैसे रोक पाएंगे। हमारे चुनाव एवं इन चुनावों में आपराधिक तत्वों का चुना जाना, देश का दुर्भाग्य है। राजनीति में आपराधिक तत्वों का वर्चस्व बढ़ना कैंसर की तरह है, जिसका इलाज होना जरूरी है। इस कैंसररूपी महामारी से मुक्ति मिलने पर ही हमारा लोकतंत्र पवित्र एवं सशक्त बन सकेगा।

मुनेश चौहान

अपराधी एवं दागी नेताओं को लेकर सुप्रीम कोर्ट एवं चुनाव आयोग इन दोनों ही संस्थाओं ने राजनीतिक दलों को कसने की काफी कोशिशें कीं, लेकिन राजनीतिक दलों की अनदेखी से इन संस्थाओं के प्रयास विफल ही रहे हैं। लेकिन इनके प्रयासों से जनता में जागरूकता बनी है, आम-मतदाता अब समझने लगे हैं कि अगर ऐसे दागी नेताओं को वोट देंगे तो आने वाले वक्त में देश की राजनीति किस दिशा में जाएगी। दागी नेताओं को लेकर सर्वोच्च अदालत ने समय-समय पर जो आदेश दिए हैं, उनसे आम जनता के बीच बड़ा संदेश तो गया है और लोग वोट डालने से पहले उम्मीदवार के बारे में विचार जरूर कर रहे हैं। लेकिन असल मुद्दा तो ऐसे दागियों को चुनाव लड़ने से रोकने का है। लम्बे समय से दागी नेताओं के चुनाव लड़ने पर पाबंदी की मांग उठती रही है, पिछले दिनों याचिका दायर कर मांग भी की गई थी कि गंभीर अपराधों में, यानी जिनमें 5 साल से अधिक की सजा संभावित हो, यदि व्यक्ति के खिलाफ आरोप तय होता है तो उसे चुनाव लड़ने से रोक दिया जाए।

सवाल है जब हमारे जनप्रतिनिधि हत्या की कोशिश, बलात्कार जैसे संगीन अपराधों में लिप्त रहने वाले लोग होंगे तो उनसे संगठित संसद कैसे आदर्श भारत का निर्माण करेंगी? कैसे राष्ट्रीय मूल्यों को बल मिलेगा? कैसे लोकतंत्र मजबूत बनेगा? इन आपराधिक एवं दागी जनप्रतिनिधियों से देश के उन्नत भविष्य की उम्मीद करना व्यर्थ है। ऐसे दागी नेता सिर्फ जटिल और लंबी कानूनी प्रक्रिया का फायदा उठाकर ही सदनों को सुशोभित करते आए हैं। ऐसा नहीं है कि ऐसे दागी नेताओं से बचा नहीं जा सकता। अगर राजनीतिक दल ठान लें तो ऐसे अपराधियों के लिए राजनीति के दरवाजे हमेशा के लिए बंद हो सकते हैं। पहली बात तो यह है कि राजनीतिक दलों को आपराधिक पृष्ठभूमि वाले किसी उम्मीदवार को टिकट ही नहीं देना चाहिए। लेकिन चुनाव जीतने के लिए राजनीतिक दल नैतिकता के मापदंडों को ताक पर रख देते हैं। वे इसी घातक प्रवृत्ति को अपनी कामयाबी की कुंजी मानते हैं। लेकिन प्रश्न है कि कब तक देश दागी नेताओं का नेतृत्व झेलता रहेगा? सुप्रीम कोर्ट ने पिछले साल दागी नेताओं के मामले में सुनवाई के बाद यह व्यवस्था दी थी कि इस बारे में संसद को कानून बनाना चाहिए। लेकिन किसी भी दल ने इस दिशा में कोई पहल नहीं की। संसद में इस मुद्दे पर सारे दल एक साथ खड़े नजर आते हैं। राजनीति में शुचिता की बात करने वाले दलों को आखिर किस बात का डर है? ऐसा कानून बन जाने से अगर दागियों को राजनीति में आने से रोकना है तो इसके लिए राजनीतिक दलों को ही इच्छाशक्ति दिखानी होगी। वरना हमारे सदन अपराधियों का अड्डा ही नजर आयेंगे। ऐसे में लोकतंत्र की मूल अवधारणा को किस स्तर की चोट पहुंचेगी, यह समझना मुश्किल नहीं है। राजनीति का अपराधीकरण जटिल समस्या है। अपराधियों का राजनीति में महिमामंडन करके राजनीतिक दल एक बार फिर नई दूषित संस्कृति को प्रतिष्ठापित कर रहे हैं, वह सर्वाधिक गंभीर मसला है। राजनीति की इन दूषित हवाओं ने देश की चेतना को प्रदूषित कर दिया है, सत्ता के गलियारों में दागी, अपराधी एवं स्वार्थी तत्वों की धमाचैकड़ी एवं घूसपैठ लोकतंत्र के सर्वोच्च मंच को दमघोंटू बनायेगी, यह सोच कर ही सिहरन होती है। यह समस्या स्वयं राजनीतिज्ञों और राजनैतिक दलों ने पैदा की है। अतः उनके भरोसे इसका समाधान भी इसी स्तर पर ढूंढने का एक और मौका हम गंवा रहे हैं। राजनीति की शुचिता यानी राजनेताओं के आचरण और चारित्रिक उत्थान-पतन की बहस इन चुनावों में भी किसी निर्णायक मोड़ पर नहीं पहुंच पायी है।

लोकसभा कुछ खम्भों पर टिकी एक सुन्दर ईमारत ही नहीं है, यह डेढ अरब जनता के दिलों की धड़कन है। उसमें नीति-निर्माता बनकर बैठने वाले हमारे प्रतिनिधि ईमानदार, चरित्रनिष्ठ एवं बेदाग छवि के नहीं होंगे तो समूचा राष्ट्र उनके दागों से प्रभावित होगा। वह राष्ट्र निश्चित रूप से कमजोर हो जाता है।

मतदाताओं की उलझन यह है कि उम्मीदवार के आपराधिक पृष्ठभूमि बारे में उन्हें ज्यादा जानकारी नहीं होती। इसी का फायदा उठा कर राजनीतिक दल ऐसे उम्मीदवारों को चुनाव मैदान में उतार देते हैं। ऐसे उम्मीदवार धन और बाहुबल की ताकत पर चुनाव लड़ते हैं और जनता के हितों, उससे जुड़े मुद्दों से उन्हें कोई सरोकार नहीं होता। इस बार भी चुनाव मैदान में दागी नेताओं की एक लम्बी श्रृखला है। ऐसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स की रिपोर्ट में बताया गया है कि पहले चरण के चुनाव में सत्रह फीसद दागी उम्मीदवार मैदान में थे, इनमें भी बारह फीसद उम्मीदवार ऐसे थे जिनके खिलाफ संगीन मामले चल रहे हैं। हैरानी की बात यह कि इनमें से बारह उम्मीदवारों ने हलफनामें में बताया कि उन पर दोष साबित हो चुके हैं। तीसरे चरण के मतदान में महाराष्ट्र में चैवन ऐसे उम्मीदवार चुनाव लड़ रहे हैं जिन पर गंभीर आपराधिक मामले चल रहे हैं। यही स्थिति सभी चरणों की हैं। कैसे सत्रहवीं लोकसभा अपराधमुक्त सांसदों से संगठित होगी?

स्वस्थ एवं आदर्श लोकतांत्रिक ढ़ांचे को निर्मित करने के लिये राजनेताओं या चुने हुए जन-प्रतिनिधियों को अपनी चारित्रिक शुचिता को प्राथमिकता देनी ही चाहिए। आपराधिक पृष्ठभूमि के जनप्रतिनिधियों को राष्ट्रहित में स्वयं ही चुनाव लड़ने से इंकार कर देना चाहिए, लेकिन वे ऐसा क्यों करेंगे? लोकतन्त्र में जब अपराधी प्रवृत्ति के लोग जनता का समर्थन पाने में सफल हो जाते हैं तो दोष मतदाताओं का नहीं बल्कि उस राजनैतिक माहौल का होता है जो राजनैतिक दल और अपराधी तत्व मिलकर विभिन्न आर्थिक-सामाजिक प्रभावों से पैदा करते हैं। एक जनप्रतिनिधि स्वयं में बहुत जिम्मेदार पद होता है एवं एक संस्था होता है, जो लाखों लोगों का प्रतिनिधित्व कर उनकी आवाज बनता हैं। हर राष्ट्र का सर्वोच्च मंच उस राष्ट्र की पार्लियामेंट होती है, जो पूरे राष्ट्र के लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होती है, राष्ट्र-संचालन की रीति-नीति और नियम तय करती है, उनकी आवाज बनती है व उनके ही हित में कार्य करती है, इस सर्वोच्च मंच पर आपराधिक एवं दागी नेताओं का वर्चस्व होना विडम्बनापूर्ण है। राष्ट्र के व्यापक हितों के लिये गंभीर खतरा है। भ्रष्टाचार और राजनीति का अपराधीकरण भारतीय लोकतंत्र की नींव को खोखला कर रहा है।

मतदाता को ही जागरूक होना होगा, वह आपराधिक रिकॉर्ड वालों को जनप्रतिनिधि न बनने दे। उसका यही पवित्र दायित्व है तथा वह भगवान और आत्मा की साक्षी से इस दायित्व को निष्ठा व ईमानदारी से निभाने की शपथ लें। दागी प्रत्याशियों पर नियंत्रण जरूरी है क्योंकि लम्बे समय से देख रहे हैं कि हमारे इस सर्वोच्च मंच की पवित्रता और गरिमा को अनदेखा किया जाता रहा है। आजादी के बाद सात दशकों में भी हम अपने आचरण, पवित्रता और चारित्रिक उज्ज्वलता को एक स्तर तक भी नहीं उठा सके। हमारी आबादी करीब चार गुना हो गई पर देश 500 सुयोग्य राजनेता भी आगे नहीं ला सका। नेता और नायक किसी कारखाने में पैदा करने की चीज नहीं हैं, इन्हें समाज में ही खोजना होता है। काबिलीयत और चरित्र वाले लोग बहुत हैं पर जातिवाद व कालाधन उन्हें आगे नहीं आने देता। राजनीतिक स्वार्थ, बाहुबल एवं वोटों की राजनीति बहुत बड़ी बाधा है। लोकसभा कुछ खम्भों पर टिकी एक सुन्दर ईमारत ही नहीं है, यह डेढ अरब जनता के दिलों की धड़कन है। उसमें नीति-निमार्ता बनकर बैठने वाले हमारे प्रतिनिधि ईमानदार, चरित्रनिष्ठ एवं बेदाग छवि के नहीं होंगे तो समूचा राष्ट्र उनके दागों से प्रभावित होगा। वह राष्ट्र निश्चित रूप से कमजोर हो जाता है। ■

क्यों चुनावी मुद्दा नहीं बन पाती शिक्षा?

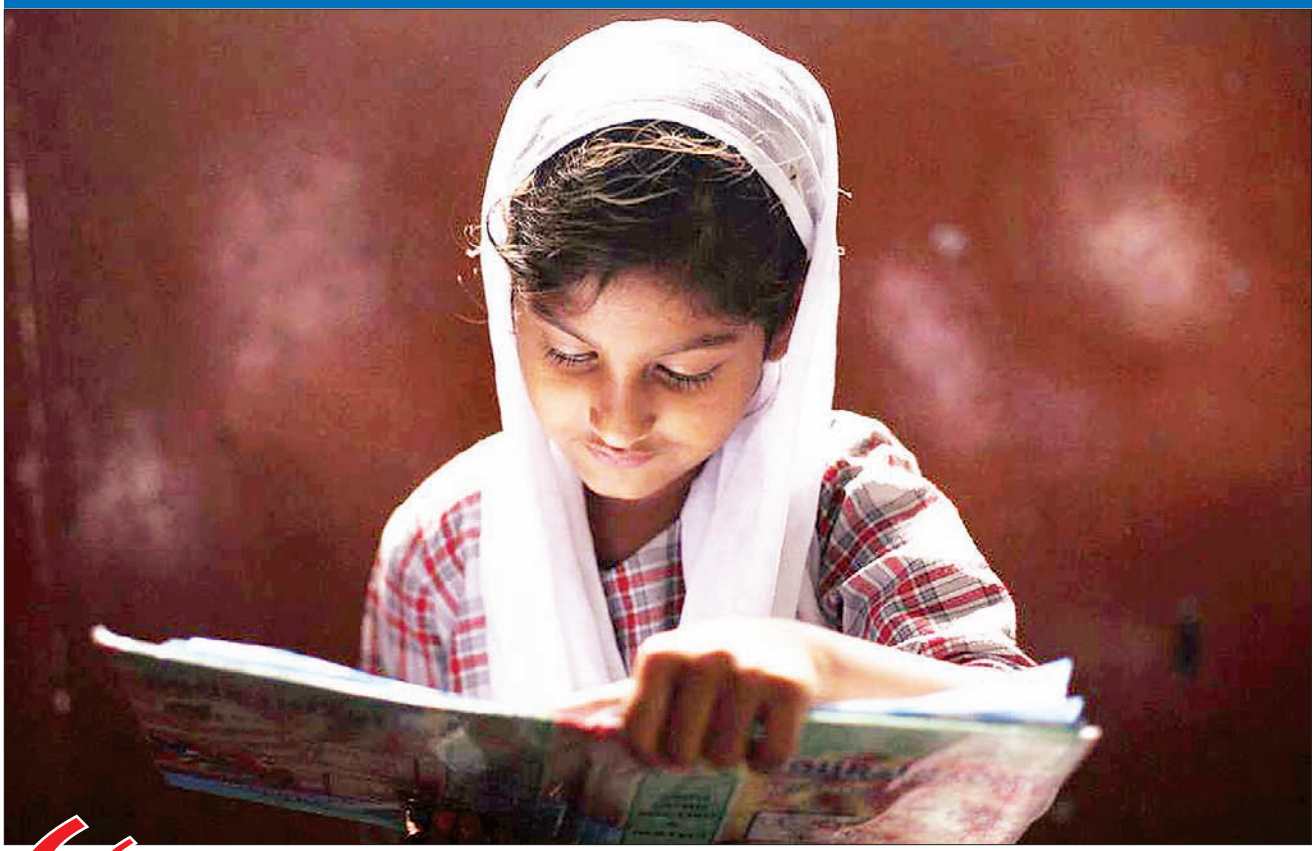

लोकसभा चुनावों का प्रचार अब तो सारे देश में जोर पकड़ चुका है। चुनावी सभाएं, रैलियां, भाषण वगैरह हो रहे हैं। पहले चरण का चुनाव तो मंगलवार को थम भी जायेगा। हर पक्ष दूसरे पर जनता को छलने और गुमराह करने के आरोप लगा रहे हैं। ये अपनी तरफ से सत्तासीन होने पर आसमान से सितारे तोड़ कर लाने के अलावा तमाम अन्य संभव-असंभव वादे भी कर रहे हैं। पर इन सबके बीच एक मुद्दा लगभग अछूता सा बना हुआ है। वह है शिक्षा का। इतने महत्वपूर्ण बिन्दु पर अभी तक कोई सारगर्भित बहस सुनने को ही नहीं मिल रही है। देश में शिक्षा का स्तर नहीं सुधरेगा तो देश बुलंदियों को कैसे छू सकेगा। क्या ये किसी को बताने की जरूरत है?

आर.के. सिन्हा

बेशक, यह अपने आप में आश्चर्य का ही विषय है कि लोकसभा या विधान सभा चुनावों के दौरान शिक्षा के मसले पर कभी पर्याप्त बहस नहीं हो पाती। दरअसल देखा जाए तो शिक्षा को राम भरोसे छोड़ दिया गया है हमने। हमने अपने यहां स्कूली स्तर पर दो तरह की व्यवस्थाएं लागू कर रखी है। पहला प्राइवेटपब्लिक स्कूल, दूसरा, सरकारी स्कूल। पब्लिक स्कूलों में तो सब कुछ उत्तम सा मिलेगा। वहां पर बेहतर इंफ्रास्ट्रचर के साथ-साथ सुशिक्षित शिक्षक भी उपलब्ध मिलेंगे। शिक्षकों पर नजर भी रखी जा रही है कि वे जिन विद्यार्थियों को पढ़ा रहे हैं, उन विद्यार्थियों का बोर्ड की परीक्षाओं में किस तरह का परिणाम रहता है। यदि बोर्ड की कक्षाओं को पढ़ाने वाले अध्यापकों का प्रदर्शन कमजोर रहता है तो इन कक्षाओं के शिक्षकों से सवाल भी पूछे जाते हैं। दंड तक दिया जाता है। इनकी कक्षाओं के छात्रों के बेहतरीन परिणाम आने पर इन्हें पुरस्कृत भी किया जाता है। पर ये सब जरूरी बातें लगता है कि सरकारी स्कूलों पर लागू ही नहीं होती। वहां पर अध्यापकों की बड़ी पैमाने पर कमी होने के साथ-साथ जरूरी इंफ्रास्ट्रक्चर का भी नितांत अभाव है। इनमें खेलों के मैदान तक नहीं हैं।अगर हैं भी तो वे खराब स्थिति में हैं। इनमें पुस्तकालय और प्रयोगशालायें भी सांकेतिक रूप से ही चल रहे हैं।

आजादी के 70 साल बाद के लोकसभा चुनाव में भी शिक्षा के मुद्दे पर बहस का होना हमारी शिक्षा को लेकर पिलपिली राजनीतिक मानसिकता को ही दशार्ता है। हां, हम अपने को कहने के लिए ज्ञान की देवी मां सरस्वती का अराधक अवश्य कह देते हैं। सरस्वती पूजा के दिन पंडाल लगाकर डिस्को डांस भी करवा देते हैं। हमारे यहां चुनावी एजेंडे के लिए पाकिस्तान, सेना, शौर्य, पराक्रम और उसके सबूत के अलावा श्मशान और कब्रिस्तान जैसे विषय ही काफी होते हैं। आखिर बुनियादी मुद्दों पर कोई भी पार्टी बहस क्यों नहीं करती?

बड़ा सवाल यह ही है कि सभी दल शिक्षा को लेकर अपनी भावी योजनाओं से देश के मतदाताओं को अवगत क्यों नहीं करा देते? उन्हें ये सब करने में डर क्यों लगता है? उसके बाद जनता अपना फैसला सुना दे। पर अभी तक के चुनाव प्रचार के दौरान ये सब देखने को नहीं मिला। यह विदित है कि शिक्षा के अधिकार कानून के तहत एक स्कूल में 35 बच्चों पर अध्यापक होना अनिवार्य है। पर नियमों को तो ताक पर रखा जा रहा है। कहीं-कहीं तो 220 बच्चों पर 1 शिक्षक ही तैनात है और कहीं-कहीं तो पूरा का पूरा स्कूल ही एकाध शिक्षामित्र के सहारे ही चल रहा है। मैं राजधानी दिल्ली की स्थिति से देश को अवगत करना चाहता हूं। दिल्ली सरकार बड़े-बड़े दावे करती है कि उसने शिक्षा के क्षेत्र में क्रांतिकारी कदम उठाए हैं। परन्तु उसके दावे और हकीकत में बहुत अंतर है। दिल्ली सरकार की तरफ से यह तो बताया जाता है कि वो स्कूलों की इमारतों को सुंदर बना रही है, पर उसकी तरफ से इस तथ्य को छिपाया जाता है कि पिछले चार साल के दौरान दिल्ली के पांच लाख बच्चे सरकारी स्कूलों में फेल हुए हैं, जिनमें से चार लाख बच्चों को फिर स्कूलों ने दाखिला देने से इंकार भी कर दिया गया है। 9वीं में जो बच्चे फेल हुए, उनमें से 52 फीसदी को फिर दाखिला नहीं मिला। क्या आप मानेंगे कि दिल्ली में 1028 स्कूलों में से 800 स्कूलों में प्रिंसिपल नहीं हैं? इनके अलावा 27 हजार से ज्यादा शिक्षकों के पद खाली पड़े हुए हैं। अब जरा देख लीजिए कि शिक्षा को लेकर एक सरकार कितने मिथ्या दावे कर रही है। मैं यहां पर अगर दिल्ली की आम आदमी पार्टी सरकार की कलई खोल रहा हूं तो इसका यह कतई मतलब नहीं है कि मैं मान चुका हूं कि अन्य राज्य सरकारें बेहतर काम कर रही शिक्षा के मोर्चे पर। सभी में उन्नीस-बीस का ही फर्क है।

अभी कुछ दिन पहले हरियाणा से एक खबर पढ़ने को मिली। खबर यह थी कि राज्य में 10वीं और 12वीं कक्षा की परीक्षाओं में जमकर नकल हुई। 10वीं की हिंदी की परीक्षा में नकल के 346 मामले दर्ज किए गए। जरा देख लीजिए कि हरियाणा जैसे विकसित राज्य में हम नकल पर काबू नहीं कर पा रहे हैं। बहरहाल, आपके पास जब किसी दल का नेता वोट मांगने आए तो जरा पूछ लें कि वो या उसकी पार्टी की शिक्षा के सवाल पर क्या नहीं है?

आप मानेंगे कि शिक्षा क्षेत्र में आकर कुछ बेहतर करने को लेकर हमारी नई पीढ़ी तो कभी उत्साहित नहीं होती। अब मेधावी नौजवान शिक्षक बनने के लिए तो तैयार ही नहीं हैं। यह सोचना होगा कि शिक्षक बनने को लेकर इस तरह का भाव नौजवानों में क्यों पैदा हो गया है? यह भी संभव है कि नौजवानों को लगता हो कि शिक्षक के रूप में अब करियर फायदे का सौदा नहीं रह गया। इसमें अस्थिरता ही अस्थिरता है। अब दिल्ली यूनिवर्सिटी के 77 कॉलेजों की जरा बात कर लेते हैं। आपको यकीन नहीं होगा कि इनमें लगभग 4 हजार शिक्षक तदर्थ शिक्षक के रूप में ही पढ़ाते हैं। देश के इतने महत्वपूर्ण दिल्ली विश्वविद्यालय में भी पिछले कई सालों से शिक्षकों की स्थायी नियुक्ति नहीं हुई है। इसलिए विश्वविद्यालय प्रशासन ने बड़े पैमाने पर तदर्थ शिक्षकों की बहाली कर रखी है, ताकि कॉलेजों में शिक्षण का कार्य सुचारू रूप से चल सके। इस प्रक्रिया में भ्रष्टाचार की शिकायतें भी मिल रही हैं। दरअसल यह दुर्भाग्यपूर्ण हालात तो सब जगहों पर ही देखी जा सकती है। ये तदर्थ अध्यापक हर दिन शोषण, मानसिक यंत्रणा, ज्यादा काम और असुरक्षा के वातावरण में नौकरी करते हैं। वास्तव में कभी-कभी बेहद निराशा होती है कि हम शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय को लेकर कितना गैर-जिम्मेदराना रवैया अपनाए हुए हैं। शिक्षा जैसे सवाल पर भी हमारे सभी राजनीतिक दल एक तरह से सोच नहीं पा रहे हैं। इस लिहाज से उत्तर भारत के राज्यों की स्थिति वास्तव में खासी दयनीय है। अभी कुछ दिन पहले हरियाणा से एक खबर पढ़ने को मिली। खबर यह थी कि राज्य में 10वीं और 12वीं कक्षा की परीक्षाओं में जमकर नकल हुई। 10वीं की हिंदी की परीक्षा में नकल के 346 मामले दर्ज किए गए। जरा देख लीजिए कि हरियाणा जैसे विकसित राज्य में हम नकल पर काबू नहीं कर पा रहे हैं। बहरहाल, आपके पास जब किसी दल का नेता वोट मांगने आए तो जरा पूछ लें कि वो या उसकी पार्टी की शिक्षा के सवाल पर क्या नहीं है? ■

दबाव एवं हिंसा की त्रासदी का शिकार बचपन

आज का बचपन केवल अपने घर में ही नहीं, बल्कि स्कूली परिवेश में बुलीइंग यानी दबाव एवं हिंसा का शिकार है। यह सच है कि इसकी टूटन का परिणाम सिर्फ आज ही नहीं होता, बल्कि युवावस्था तक पहुंचते-पहुंचते यह एक महाबीमारी एवं त्रासदी का रूप ले लेता है। यह केवल भारत की नहीं, बल्कि दुनिया की एक बड़ी समस्या है। लंदन के लैंकस्टर यूनिवर्सिटी मैनेजमेंट स्कूल के अर्थशास्त्र विभाग में असोसिएट रह चुकीं एम्मा गॉरमैन ने इस पर लम्बा शोध किया है। उन्होंने अपने इस शोध के लिए यूके के 7000 छात्र-छात्राओं को चुना।

हरिश्चन्द्र शर्मा

उन्होंने पहले उनसे तब बात की जब वे 14-16 की उम्र के थे। उसके बाद तकरीबन दस वर्षों तक उनसे समय-समय पर बातचीत की गई। गॉरमैन ने पाया कि किशोरावस्था की बुलीइंग यानी बच्चों को अभित्रस्त करना, उन पर अनुचित दबाव डालना या धौंस दिखाना, चिढ़ाना-मजाक उड़ाना या पीटना की घटनाओं ने बच्चों के भीतर के आत्मविश्वास, स्वतंत्र व्यक्तित्व, मौलिकता, निर्णायक क्षमता का दीया बुझा दिया, समस्याओं से लड़ने की ताकत को कमजोर कर दिया, पुरुषार्थ के प्रयत्नों को पंगु बना दिया। स्कूली परिवेश एवं घर के माहौल में बच्चों के साथ होने वाली बुलीइंग का नकारात्मक प्रभाव वयस्क होने के बाद जब सामने आता है तो वहां एक ऐसी ढलान होती है जहां संभावनाभरे इंसान का जन्म असंभव हो जाता है। हमें उन धारणाओं एवं मान्यताओं को बदलना होगा जो बुलीइंग की त्रासदी का आधार है, जिनको सन्दर्भ बनाकर हमने गलतफहमियों, सन्देहों और अपनी महत्वाकांक्षाओं की दीवारें इतनी ऊंची खड़ी कर दी कि बचपन ही संकट में आ गया है। आधुनिकता के इस युग में सभी अभिभावक चाहते हैं कि उनका बच्चा खूब पढ़े और इंजीनियर, डॉक्टर या कोई आईपीएस अधिकारी बने इसके लिये माता-पिता शुरू से ही बच्चे से अतिश्योक्तिपूर्ण अपेक्षाएं रखते हैं और इसके लिये उसे अभित्रस्त करते हैं, उस पर अनुचित दबाव डालते हैं और हिंसक हो जाते हैं। इस बीच अभिभावक या शिक्षक बच्चे की क्षमता को परखना भूल जाते हैं, उस पर दबाव एवं धौंस जमाने, उसको डराने, चिढ़ाने, मजाक उड़ाने या पीटने के कारण बच्चा बेहतर रिजल्ट देने के बजाय कमजोर हो जाता है, उसकी नैसर्गिक क्षमताएं अवरुद्ध हो जाती है। इसके कारण किशोरावस्था में बुलीइंग का शिकार होने वालें बच्चों में से 40 प्रतिशत के मनोरोगी होने की आशंका रहती है। मनोरोग के लक्षण प्रायः तब उभरते हैं जब बच्चे 20-25 की उम्र में पहुंचते हैं। मनोरोगों में डिप्रेशन प्रमुख होता जिसके चलते उन्हें नौकरी मिलने में दिक्कत होती है।

गॉरमैन के इस अध्ययन से यह तथ्य भी सामने आया कि लड़कियां भावनात्मक बुलीइंग का शिकार अधिक होती हैं जैसे अपने ग्रुप से अलग-थलग कर दिया जाना, दोस्तों का बातचीत बंद कर देना या किसी बात को लेकर चिढ़ाना। दूसरी तरफ लड़के हिंसक बुलीइंग का शिकार ज्यादा होते हैं। यह अध्ययन भले ही विदेश में किया गया हो, पर दुनिया भर के बच्चों पर लागू होता है। विकसित देशों में बच्चों को कानून के तहत कई अधिकार मिले हुए हैं। इसलिए उन्हें मां-बाप या किसी और रिश्तेदार की बुलीइंग का शिकार नहीं होना पड़ता है। भारत में तो बच्चे सबसे ज्यादा पिता, चाचा, बड़े भाई या दादा की बुलीइंग का शिकार होते हैं। हमारे यहां संयुक्त परिवार की परम्परा के कारण पारिवारिक अनुशासन का अच्छा-खासा आतंक रहा है। न सिर्फ परिवार बल्कि पास-पड़ोस की आंखें भी एक बच्चे के पीछे लगी रहती हैं। इसलिये बच्चे जो भी करते हैं, उसमें डर एवं भय व्याप्त रहता है।

बुलीइंग की विडम्बनापूर्ण स्थितियों के कारण जो बालक हमारे राष्ट्र के भविष्य हैं उन्हीं के ऊपर संकट के काले बादल मंडरा रहे हैं। हमें प्रायः विदेशों के ये समाचार पढ़ने को मिलते रहते हैं कि किसी किशोरवय के छात्र ने अपने ही स्कूल के बालकों पर गोलियां चला दीं। उसमें कुछ बालक मारे गए, कुछ घायल हो गए। ये समाचार बताते हैं कि वहां के बालकों में मानसिकता रुग्णता एवं सामाजिक अलगाव बढ़ते जा रहे हैं। लेकिन हमारे देश में इसका उल्टा हो रहा है। भारतीय बालक आक्रमक नहीं है। वे आक्रमण के शिकार हो रहे हैं।

कोड बिल के पालकों के इस दायित्व पर जोर दिया गया है कि वे बच्चों के साथ प्यार और दयालुता का व्यवहार करें। परिवारों और स्कूलों में संवाद का माहौल बनना चाहिए ताकि बच्चों का स्वाभाविक विकास हो सके। ताकि बचपन के सामने आज जो भयावह एवं विकट संकट और दुविधा है उससे उन्हें छुटकारा मिल सके।

गॉरमैन के इस शोध ने बालकों के साथ बुलीइंग की त्रासदी की तो पुष्टि की ही, इस बात को भी उजागर दिया कि है कि यह खतरा गहरा होता जा रहा है। बालक-बालिकाओं ने स्वीकार किया कि वे अनुचित दबाव या धौंस, चिढ़ाना-मजाक उड़ाना या पीटना, दुर्व्यवहार और उत्पीड़न के शिकार हैं। उनसे पूछा गया था कि क्या आप यह अनुभव करते हैं कि आपसे किसी व्यक्ति ने शारीरिक, भावनात्मक अथवा अनुशासनात्मक जोर-जबर्दस्ती की है, किसी ने आपके साथ कोई क्रूर या अमानवीय व्यवहार किया है? ध्यान देने कि बात यह है कि बालक-बालिकाओं को बुलीइंग बड़ी मानसिक पीड़ा पहुंचाती हैं। बच्चा अपनी मर्जी से कुछ भी करता है या अपनी आंखों से दुनिया देखने की कोशिश करने लगता है तो उसे मौखिक उपदेश से लेकर पिटाई तक झेलनी पड़ती है। उसे वह बनने की कवायद करनी पड़ती है जो घर के लोग चाहते हैं। इस तरह उसकी इच्छा, कल्पनाशीलता और सर्जनात्मकता की बलि चढ़ जाती है। घर में आमतौर पर संवादहीनता का माहौल रहता। मां-बाप बच्चों से बात नहीं करते। उसकी शिकायतों, उसकी परेशानियों को जानने की कोशिश नहीं करते। ऐसे में बच्चे के भीतर बहुत सी बातें दबी रह जाती हैं जो धीरे-धीरे कुंठा का रूप ले लेती हैं, जो आगे जाकर बच्चों को मनोरोगी बना देती है।

शोधकर्ता का मानना है कि स्कूल और घर दोनों ही जगह ताकत का खेल चल रहा है। स्कूल का प्रबंधन तो अपना सारा रोबदाब बच्चों को ही दिखाता है। लेकिन घर में बालक माता-पिता के कुल दीपक और बुढ़ापे के सहारे हैं, अतः वे उन्हें सक्षम बनाने एवं दुनिया का अनोखा बालक का दर्जा दिलाने के लिये अपने व्यवहार को ही कटू एवं हिंसक बना देते हैं। यदि माता-पिता किसी पद पर हैं तो बच्चों का चरित्र उनकी प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता है। दोनों स्थानों में परिवार और स्कूल में लीक से हटने पर बच्चों के लिये दण्ड की व्यवस्था है। लड़कियों को धमकी दी जाती है कि यदि उन्होंने कोई गलती की तो उसका गंभीर परिणाम भुगतना पड़ेगा। विडम्बना यह है कि भारतीय बालक अपने अधिकारों से अनभिज्ञ हैं। यह काम शिक्षकों और पालकों को करना चाहिए किन्तु वे दोनों ही इनके प्रति उदासीन हैं। वे बाल अधिकार को अपनी सत्ता के लिए धमकी मानते हैं। संविधान में बच्चों के जीवन, विकास और सुरक्षा की व्यवस्था है। दण्ड को बालकों के अधिकारों का अतिक्रमण माना जाता है। लेकिन इन कानूनों के होते हुए भी अज्ञानता के कारण बच्चे उनका लाभ नहीं ले पाते। इस गंभीर होती समस्या से निजात पाने के लिये एक विस्तृत बाल संहिता तैयार की जाए और उसमें बालक के अधिकारों को शामिल किया जाए। हमें इसकी बड़ी जरूरत है। क्योंकि हमारे देश के लोगों के मन में बच्चों को लेकर महत्वाकांक्षाएं बड़ी गहराई से जमी हुई हैं। यही कारण है कि हमारे देश का बचपन संकट एवं अंधेरों से घिरा हैं। बचपन को इस संकट से मुक्त करने एवं बुलीइंग की त्रासदी से मुक्ति के लिये समय समय पर प्रयत्न होते रहे हैं। बी. आर. कृष्णन के सभापतित्व में विशेषज्ञों की एक समिति ने ह्यचिल्ड्रन कोड बिल-2000 तैयार किया था। इसमें सुझाया गया है कि एक राष्ट्रीय तथा सभी राज्यों के अपने-अपने कमीशन बनाए जाएं। ये कमीशन महिला कमीशन जैसे हों। कोड बिल के पालकों के इस दायित्व पर जोर दिया गया है कि वे बच्चों के साथ प्यार और दयालुता का व्यवहार करें। परिवारों और स्कूलों में संवाद का माहौल बनना चाहिए ताकि बच्चों का स्वाभाविक विकास हो सके। ताकि बचपन के सामने आज जो भयावह एवं विकट संकट और दुविधा है उससे उन्हें छुटकारा मिल सके। ■

अपने पैशन और क्रिएटिविटी को कभी खत्म न होने दें

पूनम सचदेवा

हज़ार बर्क़ गिरे लाख आँधियाँ उट्ठें, वो फूल खिलके रहेंगे जो खिलने वाले हैं। मशहूर सहित्यकार साहिर लुधियानवी की ये पंक्तियाँ पूनम सचदेवा के व्यक्तित्व पर सटीक बैठती हैं, बात सामाजिक सरोकार की हो या फिर परिवारिक जिम्मेदारियों से लेकर फेमिली कारोबार की, पूनम सचदेवा जी ने हर पैमाने पर स्वयं को कामयाबी के शिखर पर पहुँचाया है। अमिताभ बच्चन के मशहूर रियल्टी शो कौन बनेगा करोड़पति में उनका शामिल होना उनके जज्बे को दर्शाता है। कई सामाजिक संस्थाओं के साथ सक्रिय पूनम जी से युवक पत्रिका ने एक इंटरव्यू के दौरान बातचीत की, पेश हैं उनसे हुई बातचीत के खास अंश...

सबसे पहले हम आपकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में जानना चाहेंगे, बचपन कैसा बीता, आपने एजुकेशन कहां से कंप्लीट की ?

बचपन अच्छा बीता, स्कूलिंग क्वीन विक्टोरिया से हुई, बीएससी आगरा कॉलेज से कंप्लीट की। जब में ग्रेजुएशन कर रही थी उसी दौरान मेरी शादी हो गई और कम उम्र में ही मैं परिवार की जिम्मेदारियों से जुड़ गई। कॉलेज के दिनों में ड्रामा और डिबेट्स में काफी भाग लिया करती थी। साइंस स्टूडेंट रही तो पेरेंट्स की चाहत थी कि मैं डॉक्टर बनूँ, लेकिन मुझे अभिनय करना खास पसंद था। कई बार मुंबई जाना रहता था तो मन में इच्छा होती थी कि मुझे कोई ब्रेक मिले लेकिन वक्त और जिम्मेदारियों के साथ विजन और मिशन बदलते चले गए।

शादी के बाद जिम्मेदारियों और अपनी ख्वाहिशों के बीच आपने किस प्रकार तालमेल बनाया ?

हां, निश्चित रूप से शादी के बाद बच्चे हुए उनकी परवरिश की, तो उस वक्त उनको पढ़ाना, उनको अच्छे संस्कार देना यही जिम्मेदारी और ख्वाहिश थी, लेकिन जैसे-जैसे बच्चे बड़े हुए तो मैंने सामाजिक कार्यों के साथ-साथ अपने हसबैंड के प्रोफेशन में भागीदारी शुरू की। कुछ समय शू डिजाइनिंग का काम भी मैंने उनके साथ किया। हसबैंड भारत विकास परिषद के अध्यक्ष रहे उनके साथ भी मैं उनके कार्यक्रम में शामिल होने लगी। इस बीच में जब बच्चे बड़े हो गए और उनकी शादियां हो गई तो मुझे एक तरह से एक फ्रीडम मिल गई कि मैं

सामाजिक कार्यों में कुछ अच्छा करने के लिए समय निकालूं।

आप कई संस्थाओं में सक्रियता के साथ काम कर रही हैं आपने इसकी शुरुआत कहां से की ?

सबसे पहले साल 2015 में क्वीन इन द मेकिंग इवेंट से हमने मिसेज इंडिया रही शिवांगी मलेठिया के साथ शुरुआत की। उसके बाद आज तक निरंतर कई प्रकार के आयोजन में अपने क्लब के माध्यम से कर रही हूँ, जोकि मुख्यरूप से महिला सशक्तिकरण को लेकर केंद्रित रहे।

आमतौर पर पेरेंट्स जो नहीं कर पाते हैं वह उम्मीद वे अपने बच्चों से करते हैं क्या कोई ऐसी एक्सपेक्टेशन जो आपकी आपके बच्चों से रही ?

नहीं, ऐसा कभी नहीं रहा। मेरा अपना मानना है कि हर व्यक्ति अपने आप में इंडिविजुअल है हमें अपनी इच्छा उन पर नहीं थोपनी चाहिए।

लाइफ का स्क्रीनप्ले बदलने का अगर मौका मिले तो ऐसा क्या है जो आप फिर से जीना चाहेंगी ?

अमिताभ जी के साथ केबीसी एक बार फिर से खेलना चाहूंगी।

कोई ऐसी आदत जिस पर आप का बस नहीं चलता ?

हां, कभी-कभी थोड़ी सी इमोशनल हो जाती हूं, यही एक ऐसा वक्त होता है जब मेरा खुद पर काबू नहीं रहता।

आप जीवन का क्या लक्ष्य मानती हैं ?

महिला सशक्तिकरण को लेकर में निरंतर कार्य कर रही हूं यही मेरा लक्ष्य है कि मैं ज्यादा से ज्यादा महिलाओं के काम आकर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में सहयोगी बनूँ, मैं हमेशा एक ही बात सोचती हूं कि जो मेरा पैशन है उसको मैं खुलकर जिऊँ और कभी फ्री ना बैठूं।

अपने मिशन में आप आज स्वयं को कितना कामयाब महसूस करती हैं ?

हां, जब हम कुछ अच्छा करते है तो कई बार प्राउड

फील होता है। लिखना और पढ़ना मुझे काफी पसंद है मैं हमेशा कुछ न कुछ लिखती रहती हूँ। अक्सर लिखने-पढ़ने के दौरान जब कुछ विचार निकल कर आते हैं और वह व्यवहारिक रूप से साकार होते हैं तो मन काफी प्रसन्न होता है।

आप किसको अपना इंस्पिरेशन मानती हैं जो कि हमेशा आपको कुछ अच्छा करने के लिए प्रेरित करते हैं?

कई लोग हैं ऐसे, जिनसे मुझे इंस्पिरेशन मिलती है केबीसी के दौरान अमिताभ बच्चन जी, उनसे बातचीत करने का और मिलने का मौका मिला। सेट पर जिस तरह गर्मजोशी के साथ उनका आना होता है वह निश्चित रूप से काबिले तारीफ है 70 साल से भी अधिक की उम्र में उनका यह जोश हमें काफी प्रभावित करता है।

आप लाइफ का सक्सेस मंत्रा क्या मानती हैं?

मैं यही मानती हूं कि यदि आपका पैशन जिंदा है, आपकी क्रिएटिविटी चल रही है तो आप सक्सेज हैं। जहां आप रुक गए और थक गए, मतलब आपकी सक्सेस का ग्राफ नीचे आ गया।

जो महिलाएं विषम परिस्थितयों से हार कर निराश हो चुकी है उन्हें आगे बढ़ने के लिए आप क्या सन्देश देना चाहेंगी?

महिलाओं को सबसे पहले तो अपने अंदर छिपी ताकत को पहचानना चाहिए, दूसरी बात आपके अंदर जो नकरात्मक भाव है उन्हें दरकिनार कर अपने अंदर छिपी प्रतिभा को बाहर निकालें और उसी प्रतिभा के जरिये आगे बढ़ें। अगर आप एक कदम भी आगे बढ़ाते हैं तो आगे प्रकृति आपके लिए अनेक रास्ते खोल देगी। जिंदगी के आखिरी समय में भी हार नहीं माननी चाहिए बल्कि पूरी सिद्दत के साथ डटकर उसका मुकाबला करना चाहिए।

जिंदगी का कोई खास लम्हा जिसे आप हमारे साथ शेयर करना चाहे ?

जिंदगी में कई लम्हे आये लेकिन सबसे बड़ा खुशी देने वाला लम्हा माँ बनने का था जिसे मैं कभी नहीं भुला सकती और मेरा मानना है कि हर लम्हा आपको खुशी दे सकता है बस उसमे खुशियां तलाशनी चाहिए।

युवाओं के आइडियल बदल रहे है पहले जहां वे विवेकानंद जैसी शख्सियतों को अपना आदर्श मानते थे वहीं आज फ़िल्मी जगत के सितारे उनके आइडियल नजर आ रहे है इस पर आप क्या कहना चाहेंगी?

जाहिर सी बात है जिसे वो देखेंगे उसे ही अपना आदर्श मानेंगे। वक्त के साथ सोच एक व्यवहारिक प्रक्रिया है।

आज के यूथ को आप क्या संदेश देना चाहेंगी ?

आज के युवाओं से मैं यही कहूंगी कि वे अपने जीवन का एक लक्ष्य जरूर बनाएं और वही काम करें जो उनको अच्छा लगता है अगर आपका पैसन आपका प्रोफेशन बनेगा तब आप काम को एन्जॉय करते हुए अविश्वसनीय सफलता प्राप्त करेंगे ।

अगर आपको सिस्टम में एक बड़े पद पर कार्य करते हुए विशेष अधिकार मिलें, तो आपकी सबसे पहली प्राथमिकता क्या होगी?

मेरी पहली प्राथमकिता महिलाओं की सुरक्षा के लिए रहेगी। साथ ही मेरी टीम पुरुषों को भी महिलाओं के मायने समझाएगी। अक्सर महिलाओं के पहनावे को लेकर तंज कसे जाते हैं, मेरा मानना ये है कि महिलाओं को पहनावे में बदलाव नहीं बल्कि पुरुषों को अपने नजरिये में बदलाव की जरूरत है।

जीवन में कोई सीख जो आपको अपने पेरेंट्स से मिली?

संस्कार, जिनकी बदौलत मुझे सामाजिक, पारिवारिक और व्यवहारिक जीवन में ख़ास कामयाबी मिली।

सोशल मीडिया में युवाओं की बढ़ती भागीदारी पर आपका क्या कहना है?

मेरा मानना है कि सोशल मीडिया की एक लिमिट होनी चाहिए आजकल युवा अपने किसी खास पल की फोटो सोशल मीडिया पर डालकर यादें संजो कर रखने की बात करते है लेकिन मेरा मानना है कि सोशल मीडिया पर फोटो डालने की बजाय आप उस पल को एन्जॉय करे। आजकल मोबाइल की वजह से जीवन एकांकी हो गया है। चार लोग एक साथ आपस में बैठकर बात करने की बजाय मोबाइल में ज्यादा व्यस्त दिखते हैं। ■

लाये रिश्तों मे मिठास, कुछ इस तरह...

जीवन सुख का संसार है। ईश्वर ने हमें कितने प्यार से निर्मित किया हैं। हमें जीवन को पूर्णता सुख के साथ जीना चाहिए। हर व्यक्ति सुख में जीवन की चाह में रहता है। सुख तभी मिलेगा जब हम हमारे सभी आस पास के लोगों के साथ प्रेम व आदर भाव रखेंगे। रिश्ता चाहे कोई भी हो पति या पत्नी का। पिता पुत्र का। मां बेटे का। या भाई और बहन का। हर रिश्ते में सामंजस होना आवश्यक है। सबसे महत्वपूर्ण एक दूसरे का सम्मान करना।

इसी सिलसिले में बात करते कुछ वास्तु और ज्योतिष टिप्स की जो हमें हमारे हर रिश्ते में मिठास दिलाएगा। सर्वप्रथम बात करते पति-पत्नी के मधुर रिश्ते की। युगल का शयनकक्ष उचित दिशा में होना अनिवार्य है। युगल का शयन कक्ष दक्षिण पश्चिम या दक्षिण दिशा में हो तो अति शुभ फल देगा। नवविवाहित जोडो को उत्तर पश्चिम का शयनकक्ष दिया जा सकता है। शयनकक्ष का रंग हल्का गुलाबी होने से रिश्तो में मिठास आती है। इस

दीप्ति जैन, आधुनिक वास्तु एस्ट्रो विशेषज्ञ

दिशा के शयनकक्ष में लाल रंग के परदे या चादर बिछाने से आपसी प्रेम बढ़ता है। मैडरिन डक्स का जोड़ा शयनकक्ष की दक्षिण पश्चिम दिशा में लगाएं । फेंगशुई का दोहरा खुशी चिन्ह, राधा कृष्ण की तस्वीर या लव बर्डस लगाने प्रेम का विस्तार होता है। कपल हारमोनी के लिए उनके शयनकक्ष में 'आनंद मंगल' का कौबिनेशन अरोमा डिस्पेंसर रखें । कोई भी हिंसात्मक चित्र शयनकक्ष में ना लगाएं। हंसती खेलती चित्र लगाने से मूड व व्यवहार दोनों ही अच्छा रहता है । बेड के ठीक सामने आईना ना लगाए। सोते समय पैर दक्षिण की तरफ न हो। शयन कक्ष में नाइट लैंप होना आवश्यक है। पानी का जग सोते समय साइड टेबल पर अवश्य रखें। जो पानी प्रयोग ना हुआ हो उसे सुबह किसी पेड़ में डाल दे। ज्योतिष की दृष्टि से मानसिक पीड़ा दूर होगी। व्यक्ति का चंद्रमा शुद्ध होगा। घर के बच्चों का शयनकक्ष पश्चिम दिशा में हो तो उनकी बुद्धि का विस्तार होता है। बच्चे आज्ञा का पालन करेंगे। ध्यान रहे बच्चों का शयन कक्ष कभी भी दक्षिण पश्चिम दिशा में ना दे। वे हठी व आलसी हो सकते हैं। बच्चों के शयनकक्ष की पश्चिम दिशा की दीवार पर हंसता खेलता बच्चो का चित्र लगाएं । भाई-बहनों में आपसी प्रेम बढ़ेगा ।लक्ष्य की प्राप्ति हेतु शयन कक्ष की उत्तर पश्चिम दिशा में उड़ती चिड़िया का चित्र लगाएं। एरोप्लेन या हेलीकॉप्टर का चित्र या प्रतिमा रखें । इस कक्ष में का रंग हरा या सफेद रखें । सहयोग व शांति मिलेगी।

कुंवारी लड़कियों का शयनकक्ष उत्तर पश्चिम दिशा में हो तो उनका विवाह शीघ्र होने का योग बनता है। इस कक्ष की में दक्षिण पश्चिम दिशा में चांद चांदनी का चित्र लगाएं शीघ्र विवाह होने के लिए यह अचूक उपाय है। कुंवारी लड़कियों के कक्ष में रोज का अरोमा डिस्पेंसर रखें। उनका मन मस्तिष्क ताजगी से भरपूर रहेगा। क्रोधी बालकों के लिए उनके शयनकक्ष में लेमन का अरोमा डिस्पेंसर रखे। क्रोध पर विजय प्राप्त होगी मन शांत व स्ट्रैस फ्री रहेगा। डिफरेंसड बच्चों के शयनकक्ष की पूर्व दिशा में सोलर एनर्जी 3ऊ यंत्र रखें। उचित लाभ मिलेगा। कमजोर मन को ऊजार्वान बनेगा। घर के बुजुर्गों को उत्तर पूर्व दिशा का शयनकक्ष दें ।उनके कक्ष में हर सुख सुविधा दें। साइड टेबल ,घड़ी ,पानी का जग व अलमारियों का प्रबंध करें। इस कक्ष में हल्का नीला रंग दे सकते हैं । घर के बुजुर्गों को कभी भी पश्चिम या उत्तर पश्चिम दिशा का कक्ष ना दें। दक्षिण दिशा का कक्ष भी दिया जा सकता है। उनके कक्ष में पलाश का अरोमा डिस्पेंसर रखें। उनका मन सदैव शांति सुरक्षित रहेगा। अगर किसी परिवार में पिता पुत्र में नहीं बनती तो Amethyst रत्नों का पौधा शयन कक्ष की दक्षिण पूर्व दिशा में रखें। रिश्तो में मिठास आएगी । घर के ब्रह्म स्थान में कोई भी भारी वस्तु ना रखें । इसे खुला हुआ व हवादार बनाएं। रिश्तो में आ रही खटास से मुक्ति मिलेगी। घर के ब्रह्म स्थान में Crystal से बना रिलेशनशिप 3D Harmony यंत्र रखें। शुभ फल की प्राप्ति होगी। इन कुछ उपायों से आप अपने जीवन में रिश्ते में मजबूती बना सकते हैं। रिश्ते मजबूत होंगे तो प्रगति अवश्य प्राप्त होगी।

' जरा तुम बदल जाते ,
जरा हम बदल जाते,
मुमकिन होता,
यह रिश्ते किसी सांचे में ढल जाते।' ■

पाक में क्यों बलूचिस्तान हो गया पंजाबी विरोधी

पाकिस्तान में विगत दिनों अशांत बलूचिस्तान सूबे में अज्ञात बंदूकधारियों ने एक राजमार्ग पर एक बस से यात्रियों को जबर्दस्ती उतार कर उनमें से 14 की गोली मार कर हत्या कर दी। सेना जैसी वर्दी पहने बंदूकधारियों ने कराची और ग्वादर के बीच चलने वाली पांच से छह बसों को रोका, यात्रियों के पहचान पत्रों की जांच की और फिर अपना खूनी खेल चालू कर दिया। हालांकि पाकिस्तान सरकार का कहना है कि वो नृशंस हत्याकांड की जांच कर रही है। दोषियों को तुरंत पकड़ लिया जाएगा। ये सब रस्मे- वादों की बातें हैं। पर हकीकत सचमुच में बड़ी भायवह है। सरहद के उस पार से छन-छनकर आ रही जानकारी से पता चला है कि मारे गए सभी अभागे बस यात्री मूलत: पंजाबी मुसलमान थे।

राजकुमार दंडौतिया

हत्यारों ने बस को रोककर मुसाफिरों से उनके पहचान पत्र मांगे। उन्होंने गैर-पंजाबियों को छोड़ दिया,पर पंजाबियों को निर्ममता पूर्वक मार डाला। पाकिस्तान सरकार पंजाबियों के इस कत्लेआम को दुनिया की निगाह से छुपाना चाहती है, पर यह तो सोशल मीडिया के दौर में हो नहीं पाता न? खबरें जैसे- तैसे दुनिया के सामने आ ही जाती हैं। पर ये बलूचिस्तान सूबे में पंजाबियों के कत्लेआम की पहली घटना नहीं है। वहां पर पंजाबियों पर लगातार जानलेवा हमले हो रहे हैं। पंजाबियों को बलूचिस्तान लिबरेशन आर्मी चुन-चुनकर मार रही है। ये निश्चित रूप से बलूचियों के बीच का एक आतंकी संगठन ही है। पंजाबी नौजवानों को अगवा भी किया जा रहा है। फिर उनका पता ही नहीं चल पाता। इस तरह के सैकड़ों केस हो चुके हैं।

अब सवाल यह है कि पंजाबियों को बलूचिस्तान में किस कारण से निशाना बनाया जा रहा है? जाहिर है कि पंजाबियों को मारे जाने की कोई पुख्ता वजह तो होगी ही? हालांकि, किसी भी प्रकार की हिंसा को सही तो नहीं माना जा सकता। पर यह जान लीजिए कि पंजाब प्रांत को छोड़कर सारा पाकिस्तान नफरत करता है पंजाब और पंजाबियों से। सबको लगता है कि पंजाब ही उनका शोषण कर रहा है, उनके हकों को मार कर मौज कर रहा है।

ईस्ट पाकिस्तान, जिसे अब दुनिया बांग्लादेश के रूप में जानती है, वह भी पंजाबियों के आतंक और अत्याचार और पंजाब के के वर्चस्व से निकलने के लिए के लिए ही पाकिस्तान से अलग हुआ था। बॉग्ला देश की आजादी की लड़ाई का मैं एक युद्ध संवाददाता के रूप में प्रत्यक्षदर्शी गवाह रहा हूँ।मैंनें देखा है कि उन दिनों ईस्ट पाकिस्तान में रह रहे बंगालियों पर पाकिस्तान सरकार ने किस निर्ममता के साथ नाइंसाफी की थी।किस तरह संस्कृति, साहित्य और संगीत प्रेमी बंगालियों पर उर्दू थोपी गई, ढ़ाका की बजाय कराची को देश की राजधानी बनाया गया जबकि ढाका हर लिहाज से कराची से बड़ा शहर था। कराची से इस्लामाबाद में राजधानी बाद में शिफ्ट हुई थी। इस तरह से और भी बहुत से कारण थे , जिनके चलते ईस्ट पाकिस्तान ने विद्रोह किया था। दरअसल पाकिस्तान के विचार को पंजाब ही आगे बढ़ाता है। पाकिस्तान सेना में 80 फीसद तक पंजाबी ही है, हालांकि देश में उनकी आबादी आधी के करीब ही होगी। इससे समझा जा सकता है कि पाकिस्तान सेना की जान पंजाब है। अब बात कर लें बलूचिस्तान की।बलूचिस्तान कभी भी भारत का हिस्सा रहा ही नहीं। अतः उसे आजादी के समय अलग देश घोषित करवा देना ही उचित था, जो नेहरू ने जिन्ना के कहने पर नहीं होने दिया। यदि यह हुआ होता तो अकेले बहादुर बलूची कट्टर पाकिस्तानियों का मिजाज ठीक रखते। विश्व प्रसिद्ध लेखक पत्रकार तारेक फतेह साहब मूलतः तो पाकिस्तानी हैं, लेकिन, उनके स्वतंत्र विचारों के कारण पाकिस्तानी सरकार ने जिसप्रकार उन्हें सताया, जेल में डाला, वे अपनी सारी पुश्तैनी सम्पत्ति पाकिस्तान में ही छोड़कर कनाडा जाकर बस गये हैं। वे आजाद बलूचिस्तान के सबसे बड़े हिमायतियों में एक हैं। पिछले साल जब वे दिल्काली में थे, एक शाम मुझसे मिलने आये। उन्होंने नेहरू की जिन गलतियों का बखान किया वह ज्ञानवर्धक था। उनके हिसाब से कश्मीर को संयुक्त राष्ट्र में ले जाना नेहरू की सबसे बड़ी गलती थी। दूसरी उसी के बराबर की गलती उन्होंने बलूचिस्तान को पाकिस्तान सौंपकर किया। बहरहाल आज क्षेत्रफल के लिहाज पाकिस्तान का बड़ा और पिछड़ा हुआ सूबा बलूचिस्तान ही है । विकास से कोसों दूर है बलूचिस्तान। वैसे उस क्षेत्र में अनेकों गैस के भंडार भी बताए जाते हैं। बलूचिस्तान में पंजाबी

विरोधी आंदोलन से फि लहाल तो पाकिस्तान सरकार की नींद बुरी तरह उड़ी हुई है। उसका इस बलूचों आंदोलन के कारण परेशान होना समझ भी आता है। दरअसल इसी सूबे में चीन की मदद से 790 किलोमीटर लंबा ग्वादर पोर्ट बन रहा है। पाकिस्तान सरकार को लगता है कि ग्वादर पोर्ट के बनने से देश की तकदीर बदल जाएगी। पर बलूचिस्तान के अवाम को यह सब झूठ ही लगता है। उनका मानना है कि ग्वादर पोर्ट बनने से सिर्फ पंजाब के हितों को ही लाभ होगा। उन्हें तो बस छला ही जा रहा है।

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान के लिए यह वास्तव में बेहद ही नाजुक वक्त है। एक तरफ उनके देश की आर्थिक स्थिति लगातार खराब होती रही है, दूसरी ओर सबसे बड़ा प्रॉत बलूचिस्तान जल रहा है। पाकिस्तानी अवाम अपने प्रधानमंत्री से नाखुश है। उन्हें जिन उम्मीदों के साथ सत्ता की चाबी सौंपी गई थी पाकिस्तान जनता ने, वो अब खत्म सी हो गई हैं। एक बात और कि बहुत से पाकिस्तानी इमरान खान से इसलिए भी नाराज हैं कि पाकिस्तान सरकार ने जलियांवाला बाग कांड के लिए ब्रिटिश सरकार से माफी नहीं मांगी। वो सिर्फ कोहिनूर की ही मांग कर रही है।

बहरहाल, हम फिर से अपने मूल विषय पर लौटना चाहेंगे। बलूचिस्तान की जनता को मोटा-मोटी यही लग रहा है कि उनके क्षेत्र के संसाधनों से पंजाब और पंजाबियों का ही पेट भरा जाएगा। उनकी मुख्य चिन्ता इसलिए ही है। सच पूछा जाए तो इसलिए ही बलूचिस्तान में पंजाबियों से घोर नफरत की जाती है।

सच पूछा जाए तो बलूचिस्तान तो एक क्षण क्षणभर पाकिस्तान का अंग बनकर रहना ही नहीं चाहता। वो तो पाकिस्तान सेना की ताकत ने ही उसे पाकिस्तान का हिस्सा बनाकर रखा हुआ है। पाकिस्तानी सेना स्वात घाटी और बलूचिस्तान में विद्रोह को दबाने के लिए आये दिन टैंक और लड़ाकू विमानों तक का इस्तेमाल करती रहती है। अफसोस तो यह होता है कि जो पाकिस्तान बात-बात पर कश्मीर का रोना रोता होता है, उसने कभी भी बलूचिस्तान में कायदे कि शिक्षा व्यवस्था भी नहीं की। बलूचिस्तान का यह साराक्षेत्र ही कमोबेश शिक्षा से वंचित है। पाकिस्तान के चार सूबे हैंः पंजाब, सिंध, बलूचिस्तान और खैबर-पख़्तूनख़्वा। इनके अलावा पाक अधिकृत कश्मीर और गिलगित-बल्टिस्तान भी पाकिस्तान द्वारा नियंत्रित हैं , जिसे पाक ने अवैध रूप से भारत से हड़प रखा है। पाकिस्तानी सेना बलूचिस्तान में महिलाओं के साथ आयेदिन खुलेआम बलात्कार करती रहती है। मर्दों को बड़ी बेरहमी और बेदर्दी से मारती है। एक महत्वूर्ण बात यह भी है बलूचिस्तान और सिंध से कोई आतंकवादी बनने नहीं जाता। आतंकवादी पंजाब और खैबर पख्तूनख्वा से बनते हैं या बनाये जाते हैं। हाफिज सईद और मसूद अजहर भी पंजाबी ही हैं और उनके केन्द्र भी पंजाब प्रॉत में ही हैं।

अब पाकिस्तान के पास भी किस तरह के विकल्प बच रहे हैं? अब पाकिस्तान सरकार बलूचिस्तान में विद्रोह को दबा तो नहीं सकती। अब तो उन्हें बलूचिस्तान की जनता को उसके हक देने होंगे। अगर वो इस मोर्चे पर सफल नहीं होती तो बलूचिस्तान में विद्रोह और भड़क जाएगा। तब बलूचिस्तान का पाकिस्तान का अंग बने रहना कठिन होगा।एक नये बांग्ला देश के निर्माण की भूमिका प्रारम्भ होते देर नहीं लगेगी। इस बीच, भारत को भी बलूचिस्तान की जनता के मानवाधिकारों की बहाली का समर्थन करते रहना चाहिए। यदि भारत तिब्बत के लोगों के हक में खड़ा हो सकता है, तो उसे बलूचिस्तान की जनता का भी साथ देना ही चाहिए। ■

औरत व दलित विरोध का दूसरा नाम आजम खान

जिस बात को लेकर मन में भय था वह लोकसभा चुनाव प्रचार के दौरान दिखाई देने लगी है। अभी तो चुनाव प्रचार को काफी समय तक चलना है कपर देख लीजिए कि रामपुर से समाजवादी पार्टी के उम्मीदवार आजम खान ने अपनी मुख्य प्रतिद्वंदी भाजपा की उम्मीदवार जयप्रदा के खिलाफ कितनी ओछी और अश्लील टिप्पणी कर डाली है। आजम खान की टिप्पणी को यहां पर बताना नारी शक्ति का घोर अनादर होगा। इसलिए उसे यहां पर दुहराने का सवाल ही नहीं होता है।

राहुल कुमार

जब वो जयप्रदा के खिलाफ बदबूदार बयानबाजी कर रहे थे तब मंच पर अखिलेश यादव समेत पार्टी के तमाम बड़े नेता तालियाँ बजा रहे थे। आजम खान जैसे धूर्त , बेगैरत इंसान के खिलाफ चुनाव आयोग को तुरंत कठोर कार्रवाई कर भी दी है । उन्हें तीन दिन तक घर बैठने का आदेश हुआ है कइसी प्रकार, एक भड़काऊ बयान के लिए मुख्मंत्री योगी, पूर्व मुख्यमंत्री बहन मायावती और केन्द्रीय मंत्री मानेका गाँधी को भी क्रमशः तीन और दो-दो दिन चुनाव प्रचार से रोका गया है कलेकिन, बेहतर तो यह होता कि इस प्रकार के नारी समाज को अपमानित करने वाले शर्मनाक बयान के लिए उन्हें इस चुनाव से बाहर कर दिया जाता। उनकेघटिया शब्दकोश से निकले हुए स्तरहीन शब्द सम्पूर्ण महिला जगत का घोर अपमान है। जयाप्रदा तो बस बहाना मात्र है। आखिर क्यों अब समाजवादी पार्टी की वरिष्ठ नेत्री जया बच्चन आजम खान के खिलाफ तुरंत एक्शन लेने की मांग नहीं कर रही हैं? क्या उन्हें लगता है कि आजम खान का बयान सामान्य है?

आजम खान औरतों का अपमान करने में पहले से ही उस्ताद रहे हैं। आजमखान ने समाजवादी पार्टी की सरकार के दौर में बुलंदशहर में माँ- बेटी के साथ हुए सामूहिक बलात्कार पर भी अपनी गन्दी राजनीति की गोबर डालने की कोशिश की थी। याद कर लीजिए कि ये वही आजम खान हैं जिन्होंने करीब ढाई दशक पहले लखनऊ के एक सरकारी गेस्टहाउस में उन्हें आवंटित एक कमरे के दरबाजे में छेद को लेकर भारी हंगामा किया था। तब आजमखान ने दरवाजे के एक छेद को अपने घर की औरतों की इज्जत आबरू से जोड़ा था। उन्होंने तब उस गेस्टहाउस के प्रबंध अधिकारी से इसी तर्क के साथ बेहद घटिया सलूक किया था। तब आजम खान हद से आगे बढ़े थे और अधिकारी से अपमानजनक बात कही तो उस अधिकारी ने उन्हें उन्हीं की भाषा में उत्तर दिया था। जाहिर है, उस अधिकारी के बदले तेवर ने उनकी बोलती बंद कर दी थी। दरअसल अपनी भैंस को एक आम हिंदुस्तानी औरत से ज्यादा सम्मान देने वाले आजम खान तहजीब से बहुत दूर रहते हैं। इन्होंनेजयप्रदा के लिये रक्कासा शब्द का इस्तेमाल किया था। दरअसल महिलाओं का सम्मान करना उन्हें सिखाया ही नहीं गया है। मुस्लिम वोट के लिये पहले मुलायम सिंह यादव और अब अखिलेश यादव उन्हें सर पर बैठाये हैं। दरअसल अगर आप आजम खान की राजनीति पर पर गहरी नजर? खें तो आप देखेंगे कि वे घोर महिला और दलित विरोधी हैं। उन्होंने 2015 में रामपुर के दलितों की आंखों से आंसू निकलवा दिए थे। उस वक्त आजम खान एक शॉपिंग माल में कार पार्किंग बनवाने के लिए एक दलित बस्ती को खुलेआम उजाड़ रहे थे। दरअसल वे तब रामपुर के तोपखाना क्षेत्र मेंअपना एक विशाल मॉल बनवा रहे थे। पर मॉल की पार्किंग नहीं बनी थी। तब आजम खान कोपार्किंग बनाने के लिए मॉल के निकट एक दशकों पुरानी वाल्मीकि बस्ती दिखाई दे गयी। सो आजम खान ने उस दलित बस्ती के 50 मकानों को तोड़ने का फरमान नगरपालिका को सुना दिया। फरमान चूँकि रामपुर के मुख्यमंत्री समझे जाने वाले आजम खान का था, इसलिए नगरपालिका और रामपुर का पूरा प्रशासन उस गरीब दलित बस्ती को तोड़ने के लिए दलबल के साथ लग गया। यह तो आजम खान के दलित विरोध का एक छोटा सा उदाहरण था।आप देखेंगे कि आजम खान को विवादों में रहना बेहद पसंद है। उन्होंने कुछेक साल पहले करगिल जंग में मुसलमान सैनिकों की भूमिका को लेकर भी एक शर्मनाक टिप्पणी कर दी थी। यह कहकर उन्होंने एक तरह से शहीद अब्दुल हमीद और शहीद मोहम्मद हनीफुद्धीन जैसे भारतीय सेना के उन शूरवीरों का अपमान किया जिन्होंने मातृभूमि के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया था। शहीद अब्दुल हमीद को 1965में पाकिस्तान के खिलाफ युद्ध में असाधारण बहादुरी के लिए महावीर चक्र और परमवीर चक्र से नवाजा गया था। इसी तरह से करगिल जंग की कहानी हनीफ मोहम्मद का उल्लेख किए बिना अधूरी ही रहेगी। कारगिल युद्ध में उसकी दिलेरी की दास्तां आज भी देशवासियों की जुबान पर है। अब अक्ल से पैदल आजम खान को कौन बताए कि भारतीय सेना धर्म या जाति के आधार पर विभाजित नहीं है। अफसोस कि उनके जैसे बीमार मानसिकता के लोगों को हर बात में साम्प्रदयिकता ही फैलानी होती है। क्या उन्होंने भारत के 1950 में आयोजित पहले गणतंत्र दिवस समारोह में पहली फ्लाई पास्ट का नेतृत्व करने वालेस्क्वॉड्रन लीडर इदरीस हसनलतीफ के बारे में सुना है?वे तबहॉक्स टैम्पेस्ट लड़ाकू विमान उड़ा रहे थे। तब लड़ाकू विमानों ने वायुसेना केअंबाला स्टेशन से उड़ान भरी थी।लतीफआगे चलकर भारतीय वायुसेना के प्रमुख भी रहे। उनके नाम पर दिल्ली कैंटक्षेत्र में एक रोड भी है। वे 18 साल की उम्र में 1941 में रॉयल इंडियन एयर फोर्समें शामिल हुए थे। उन्होंने 1962,1965 और 1971 की जंगों में दुश्नम की कमर तोड़ कर रख दी थी। उन्हेंवर्ष 1981 मेंरिटायर होने के बाद महाराष्ट्र का राज्यपाल और फ्रांस में भारत का राजदूत नियुक्तकिया गया था। अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय के पूर्व उप कुलपति जमीरुद्दीन शाह ने दशकों भारतीय सेना की सेवा की। जमीरुद्दीन शाह सेना में जनरल रहे हैं। आजम खान को यह मालूम नहीं कि सेना के सभी केन्द्रों में मंदिर,मस्जिद,चर्च वगैरह भी अनिवार्य रूप से होते हैं। सेना में सभी मजहबों का आदर होता है। उन्होंने सेना को धर्म के आधार पर बांटने की चेष्टा करके बेहद खतरनाक खेला था। आजम खान जैसे नेता समाज और देश को धर्म और जाति के नाम पर तार-तार कर रहे हैं। ये देशको दीमक की तरह खा रहे हैं। इन्हें लोकसभा या विधानसभा में पहुंचने का कोई अधिकार ही नहीं है। चुनाव आयोग को ऐसे घटिया बयानबाजी करने वाले सांप्रदायिक नेता को चुनाव से पूरी तरह बाहर कर देना चाहिए। ■

आजम खान जैसे नेता समाज और देश को धर्म और जाति के नाम पर तार-तार कर रहे हैं। ये देशको दीमक की तरह खा रहे हैं। इन्हें लोकसभा या विधानसभा में पहुंचने का कोई अधिकार ही नहीं है। चुनाव आयोग को ऐसे घटिया बयानबाजी करने वाले सांप्रदायिक नेता को चुनाव से पूरी तरह बाहर कर देना चाहिए।

कहानी

सपने पूरे करने की बारी आई तो वह क्यों छटपटा उठी। पति के खिलाफ बेटी के सपनों को पूरा करती महिला की कहानी उषा रानी की कलम से।

पिंजरे वाली मुनिया

तरंग अपने नाम के अनुरूप शोख, चंचल और मस्त थी। लेकिन ऊंचे घराने में शादी क्या हुई वह तो पिंजरे वाली मुनिया बन कर रह गई। उस की चंचलता, सपने, इच्छाएं सभी बिखर कर रह गए। लेकिन जब बेटी के सपने पूरे करने की बारी आई तो वह क्यों छटपटा उठी। पति के खिलाफ बेटी के सपनों को पूरा करती महिला की कहानी उषा रानी की कलम से। मरा हुआ मन भी कभीकभी कुलबुलाने लगता है। आखिर मन ही तो है, सो पति के आने पर उन्होंने हिम्मत कर ही डाली। आज चलिए मन मंदिर में चल कर परिणीता देख आते हैं। नई ऐक्ट्रेस का लाजवाब काम है। अच्छी रीमेक है। मैं ने टिकट मंगवा लिया है। टिकट मंगवा लिया? यह तुम्हारा अच्छाखासा ठहरा हुआ दिमाग अचानक छलांगें क्यों लगाने लगता है? पता है न कि पिक्चर हाल की भीड़भाड़ में मेरा दम घुटता है। मंगा लो सीडी, देख लो। इतना बड़ा प्लाज्मा स्क्रीन वाला टीवी किस लिए लिया है? हाल के परदे से कम है क्या? तुम भी न तरंग, अपने मिडिल क्लास टेस्ट से ऊपर ही नहीं उठ पातीं। वह चुप हो गई। पति से बहस करना, उन की किसी बात को काटना तो उन्होंने सीखा ही नहीं है। बात चाहे कितनी भी कष्टकारी हो, वह चुप ही लगा जाती हैं। वैसे यह भी सही है कि जितनी सुखसुविधा, आराम का, मनोरंजन का हर साधन यहां उपलब्ध है, इस की तो वह कभी कल्पना कर ही नहीं सकती थीं। वह स्वयं से कई बार पूछती हैं कि इतना सबकुछ पा कर भी वह प्रसन्न क्यों नहीं? तब उन का अंतर्मन चीत्कार कर उठता है। तरंग, क्या जीवन जीने के लिए, खुश रहने के लिए शारीरिक सुख- सुविधाएं ही पर्याप्त हैं? क्या इनसान केवल एक शरीर है? तो फिर मनुष्य और पशुपक्षी में क्या अंतर हुआ? तुम तो स्वच्छंद विचरती चिड़िया से भी बदतर हो। पिंजरे वाली मुनिया में और तुम में अंतर क्या है? तुम भी तो अपना मुंह तभी खोलती हो जब कहा जाए।

ठीक वही बोलती हो जो सिखाया गया हो, न एक शब्द कम, न एक शब्द अधिक। और अपने अंतर्मन की इस आवाज को सुन कर उन का मन हाहाकार कर उठा। लेकिन घर आने वाला हर मेहमान, रिश्तेदार उन की तारीफ करते नहीं थकता कि तरंग अपनी बातों में शहद घोल देती हैं, सब का मन मोह लेती हैं। वह सोचने लगीं कि सब का मन वह मोह लेती है, तो कोई कभी उन का मन मोहने की कोशिश क्यों नहीं करता? एक साधारण मध्यवर्गीय परिवार की असाधारण लड़की। तीखे नाकनक्श, गोरा रंग, लंबा छरहरा शरीर। पढ़ने में जहीन, क्लास में हमेशा फर्स्ट। कभी पापा की सीमित आय में उसे सेंध नहीं लगानी पड़ी। फेलोशिप, स्कालरशिप, बुकग्रांट, बचपन से खुशमिजाज, हमेशा गुनगुनाती, लहराती, बलखाती लड़की को दादी कहतीं, यह लड़की आखिर है क्या? कभी इसे रोते नहीं देखा, चोट लग जाए तो भी खिलखिला कर हंसना, दूसरों को हंसाना। इस का नाम तो तरंग होना चाहिए। और पापा ने सचमुच उन का नाम विजया से बदल कर तरंग कर दिया। वह ऐसी ही थीं। पूरी गंभीरता से पढ़ाई करते हुए गाने गुनगुनाना। चलतीं तो लगता दौड़ रही हैं, सीढ़ियां उतरतीं तो लगता छलांगें लगा रही हैं। स्कूलकालिज में सब कहते, तुम्हारा नाम बड़ा सोच कर रखा गया है। हमेशा तुम तरंग में ही रहती हो। और उस दिन उन की ननद कह रही थीं, समझ में नहीं आता भाभी, आप का नाम आप के स्वभाव से एकदम उलटा क्यों रखा अंकलआंटी ने? आप इतनी शांत, दबीदबी और नाम तरंग। क्या कहतीं वह? कैसे कहतीं कि यहां, इस घर में आ कर तरंग ने हिलोरें लेना बंद कर दिया है। बी.काम। के पहले साल में वह बहुत बीमार हो गई थीं। सब के मुंह यह सोच कर लटक गए थे कि तरंग का क्या हाल होगा, लेकिन वह सामान्य थीं बल्कि उन्होंने पापा को धीरज बंधाया, पापा, क्या हो गया? यह सब तो चलता रहता है। मेरे पास 2 वर्ष हैं अभी तो, आप देखिएगा, गोल्ड मेडल मैं ही लूंगी। पापा आत्मविश्वास से ओतप्रोत उस नन्हे से चेहरे को निहारते ही रह गए थे। उन की बेटी थी ही अलग। उन्हें गर्व था उन पर। ड्रामा, डांस सब में आगे और पढ़ाई तो उन की मिल्कीयत, कालिज की शान थीं, प्रिंसिपल की जान थीं वह। आईआईएम कोलकाता के सालाना जलसे में स्टेज पर उर्वशी बनी तरंग सीधी सिद्धांत के दिल में उतर गईं।

सारा अतापता ले कर सिद्धांत घर लौटे और रट लगा दी कि जीवनसंगिनी बनाएंगे तो उसी को। मां ने समझाया, देख बेटा, इतने साधारण परिवार की लड़की भला हमारे ऊंचे खानदान में कहां निभेगी? इन लोगों में ठहराव नहीं होता। जवाब जीभ पर था। सब हो जाता है मां। आएगी तो हमारे तौरतरीकों में रम जाएगी। तेज लड़की है, बुद्धिमती है, सब सीख जाएगी। यह भी एक चिंता की ही बात है बेटा। इतनी पढ़ीलिखी, इतनी लायक है तो महत्त्वाकांक्षिणी भी होगी। आगे बढ़ने की, कुछ करने की ललक होगी। कहां टिक पाएगी हमारे घर में? पापा ने दबाव डालना चाहा। पापा, आप भीड़्जब उसे घर बैठे सारा कुछ मिलेगा, हर सुखसुविधा उस के कदमों में होगी तो वह रानीमहारानी की गद्दी छोड़ कर भला चेरी बनने बाहर क्यों जाएगी? हर तर्क का जवाब हाजिर कर के सिद्धांत ने सब का मुंह ही बंद नहीं किया, उन्हें समझा भी दिया। तरंग ब्याह कर आ गईं। तरंग के घर वालों की तो जैसे लाटरी खुल गई। भला कभी सपने में सोच सकते थे, बेटी के लिए ऐसा घर जुटाना तो दूर की बात थी। घर बैठे मांग कर ले गए लड़की। तरंग भी बहुत खुश थी। सिद्धांत कद में उस के बराबर और जरा गोलमटोल हैं तो क्या हुआ। इतने बड़े बिजनेस हाउस की वह अब मालकिन बन गई थीं।

मेहमानों के जाने, लोगों का आतिथ्य ग्रहण करने और मधुयामिनी से लौटते 2 महीने निकल गए। ऐसे खुशगवार दिन तो इसी तरह पंख लगा कर उड़ते हैं। माउंट टिटलस पर बर्फ के गोले एकदूसरे पर मारतेमरवाते स्विट्जरलैंड की सैर, तो कभी रोशनी से जगमगाते सुनहरे एफिल टावर को निहारता पेरिस का कूज। वेनिस के जलपथ में अठखेलियां करते वे दोनों कब एकदूसरे के दिलों में ही नहीं शरीर में भी समा गए, पता ही नहीं चला। वे दो बदन एक जान बन चुके थे। ऐसे में कोई छोटीमोटी बात चुभी भी तो तरंग ने उसे गुलाब का कांटा समझ कर झटक दिया। उस दिन पेरिस का मशहूर लीडो शो देखने के लिए तरंग अपनी वह सुनहरी बेल वाली काली साड़ी मैचिंग ज्वेलरी के साथ पहन कर इठलाती निकली तो सिद्धांत ने एकदम टोक दिया, बदलो जा कर, यह क्या पहन लिया है? वह आसमानी रंग वाली शिफान पहनो, मोती वाले सेट के साथ। चुपचाप उन्होंने अपने वस्त्र बदल तो लिए थे पर कुछ समझ में नहीं आया कि इस में क्या बुराई थी। लेकिन उन सुनहरे पलों में वह कटुता नहीं लाना चाहती थीं। इसलिए चुप रहीं। अब उस दिन कोकाकोलाके एम.डी। के यहां जाने के लिए उन्होंने बड़े शौक से मोतियोंके बारीक झालर वाली ड्रेस निकाल कर रखी थी, मोतियों के ही इटेलियन सेट के साथ। बाथरूम से बाहर निकलीं तो देखा सिद्धांत बड़े ध्यान से उस ड्रेस को देख रहे थे। खुश हो कर वह बोलीं, अच्छी है न यह ड्रेस? अच्छी है? मुझे तो यह समझ में नहीं आता कि तुम हमेशा यह मनहूस रंग लादने को क्यों तैयार रहती हो? सिद्धांत की आवाज में बेहद खीज थी। चुपचाप तरंग ने गुलाबी सिल्क पहन ली, लेकिन अपनी छलछलाई आंखों को छिपाने के लिए उन्हें दोबारा बाथरूम में घुसना पड़ा था। उस के बाद उन्होंने सभी काले कपड़े अपने वार्डरोब से निकाल ही दिए। कभीकभी उन्हें अपने होने का जैसे एहसास ही नहीं होता। जब उन की अपनी कोई इच्छा ही नहीं तो उन का तो पूरा का पूरा अस्तित्व ही निषेधात्मक हो गया न? कितने सपने थे आंखों में, कितनी योजनाएं थीं मन में। विवाह के बाद तो उन योजनाओं ने और भी वृहद् रूप धर लिया था। इतने बड़े व्यवसाय का स्वामित्व तो सारी की सारी पढ़ाई को सार्थक कर देगा। पर हुआ क्या? मन में उमंग और

मम्मीपापा की दी हुई सीख और पारिवारिक संस्कारों ने उन की जबान पर ताला जड़ दिया था। छटपटाहट में कई रातें आंखों में ही कट गईं। पर करें तो क्या करें? सोने का पिंजरा तोड़ने की तो हिम्मत है नहीं। और जैसा होता है, धीरेधीरे रमतेरमते वह उसी वातावरण की आदी हो गई।

तरंग लिए मुसकरा कर जब उन्होंने सिद्धांत से कहा था, अब बहुत हो चुकी मौजमस्ती, आफिस में मेरा केबिन तैयार करवा दीजिए। कल से ही मैं शुरू करती हूं। महीना तो काम समझने में ही लग जाएगा।

सिद्धांत अवाक उन का मुंह देखने लगे। क्या हुआ? ऐसे क्या देख रहे हैं आप? तुम आफिस जाओगी? पागल हो गई हो क्या? हमारे खानदान की औरतें आफिस में? अरे, तो क्या इतनी मेहनत से अर्जित एम।बी।ए। की डिगरी बरबाद करूं घर बैठ कर? बोल क्या रहे हैं आप? वह सचमुच हैरान थीं। हां, डिगरी ली, बहुत मेहनत की, ठीक है। पढ़ीलिखी हो, घर के बच्चों को पढ़ाओ, अखबार पढ़ो, पत्रिकाएं पढ़ो, टीवी देखो, इतना बोल कर सिद्धांत उठ कर चल दिए। तरंग को काटो तो खून नहीं। मम्मीपापा की दी हुई सीख और पारिवारिक संस्कारों ने उन की जबान पर ताला जड़ दिया था। छटपटाहट में कई रातें आंखों में ही कट गईं। पर करें तो क्या करें? सोने का पिंजरा तोड़ने की तो हिम्मत है नहीं। और जैसा होता है, धीरेधीरे रमतेरमते वह उसी वातावरण की आदी हो गई। विद्रोह का सुर तो कभी नहीं उठा था पर अब भावना भी लुप्त हो गई। दिनमहीने इसी तरह बीतते गए। 4 साल में प्यारी सी पुलक और गुड्डा सा श्रीष तनमन को लहरा गए। अधूरे जीवन में संपूर्णता आ गई। पूरा दिन बच्चों में बीतने लगा। उन का पढ़नापढ़ाना और उसी में व्यस्त तरंग को देख सिद्धांत ने भी चैन की सांस ली। वरना तरंग का मूक विद्रोह और सूनी अपलक दृष्टि को झेलना कभीकभी सिद्धांत के लिए कठिन हो जाता। वह कई बार संकल्प करती हैं कि जिस तरह उन के सपने चकनाचूर हुए, सारी कामनाएं राख हो गईं, ऐसा पुलक के साथ नहीं होने देंगी। पर विद्रोह की चिनगारी भड़कने से पहले ही राख हो जाती है। विदाई के समय दी गई मम्मी की नसीहत एकदम याद जो आ जाती है : बेटी, तू हमेशा अपनी इच्छा की मालिक रही है। अपनी तरंग में कभी किसी को कुछ नहीं समझा तू ने। पर ससुराल में संभल कर रहना। हर बात को काटना, अपनी मरजी चलाना यह सब यहीं छोड़ जा। वैसे भी वे बड़े लोग हैं, उन का रखरखाव और तरह का है। तेरी किसी भी हरकत से उन की प्रतिष्ठा पर आंच नहीं आने पाए। जैसा वे कहें वैसा ही करना, जो वे चाहें वही चाहना, जितना वे सोचें उतना ही सोचना। और तरंग मम्मी की बात मान कर पिंजरे वाली मुनिया बन गईं। कितनी विचित्र होती हैं न इन भारतीय संस्कारी परिवारों की कन्याएं। पिता के घर से विदा होते समय हाथ से पीछे की ओर धान उछालती हुई अपनी प्रकृति, आदतें, प्रवृत्तियां सबकुछ छोड़ आती हैं। इसीलिए उन्हें दुहिता कहते हैं शायद। लेकिन एक जगह दिक्कत आ गई कि वह अपनी भावनाओं को, अपनी सोच को, ससुराली सांचे में नहीं ढाल पाईं। करतींकहतीं उन के मन की पर सोचतींमहसूसतीं उन से अलग। इसी अंतराल ने उन्हें अकसर झिंझोड़ा है, निचोड़ा है। दिनों को महीनों में और महीनों को सालों में बदलने में भला देर कब लगती है? पुलक ने 12वीं कर ली है। एकदम मां जैसी वह भी बहुत जहीन है। उस ने जे।ई।ई। की स्क्रीनिंग पार कर ली है। सिद्धांत तो उस के प्रतियोगिता में बैठने के ही पक्ष में नहीं थे, तरंग ने ही जैसेतैसे मना लिया था। अब बारी आई है मेन्स में बैठने की। पुलक ने अपने स्तर से भरपूर तैयारी की है और तरंग ने पूरी जान लगा दी है। फिजिक्स, केमिस्ट्री, मैथ्स को नए सिरे से रात भर जाग कर पढ़ा है तरंग ने। बेटी कहीं अटकी और समाधान ले कर मां तैयार। सिद्धांत सब देख रहे हैं और उन के पागलपन पर हंस रहे हैं। घर के सभी लोगों ने कह दिया कि मेन्स में बैठने की कोई जरूरत नहीं। जिस दर जाना नहीं वहां का पता क्या पूछना? लेकिन पुलक ने हार नहीं मानी। उस ने पापा से लाड़ लगाया, पापा, मुझे सिर्फ जरा अपनी क्षमता मापने दीजिए। कौन सा मैं आ जाऊंगी? मैं ने तो कोचिंग वगैरह भी नहीं ली है, न पोस्टल न रेगुलर। मेरी क्लास के बच्चों ने तो 2-2 कोचिंग ली हैं।

दिल्ली जा कर टेस्ट दिए हैं, क्लासें की हैं। मैं जानती हूं पापा, आना मुश्किल ही नहीं, असंभव है। मैं तो बस, अपने आप को आजमाने के लिए बैठना चाहती हूं। प्लीज, पापा, प्लीज। और सिद्धांत पसीज गए। उन्होंने सोचा, आना तो है नहीं, करने दो पागलपन। बोले, चल, कर ले शौक पूरा। तू भी क्या याद करेगी अपने पापा को। हंसती खिलखिलाती पुलक मेन्स में बैठ गई। और यह क्या? शायद निषेध संघर्ष करने की क्षमता में एकदम वृद्धि कर देता है। व्यक्ति को अधिक गहनता से उत्साहित करता है। पुलक की तो रैंक भी 400 की आ गई है। आराम से दिल्ली में प्रवेश मिल जाएगा। ऐसा तो सचमुच न पुलक ने सोचा था और न ही तरंग ने। अब? मांबेटी दोनों ऐसी सकते में हैं जैसे कोई अपराध कर डाला हो। पुलक की इतनी बड़ी उपलब्धि इस परिवार के घिसेपिटे विचारों या पता नहीं झूठी मानमर्यादा के कारण एक पाप बन गई है। दूसरे परिवारों में तो बच्चे के 3-4 हजार रैंक लाने पर भी उस की पीठ ठोंकी जा रही होगी, जश्न मनाया जा रहा होगा। बेचारी पुलक का हफ्ता इसी उलझन में निकल गया कि बताए तो कैसे बताए?

तरंग भी हैरान हैं। वह मौके की तलाश में हैं कि यह खुशखबरी कैसे दें, कब दें। बात तो सचमुच हैरानी की है। दुनिया कहां से कहां छलांग लगा रही है। करनाल जैसे छोटे से शहर की कल्पना चावला ऐसी ऊंचाइयां छू सकती है तो उसी भारत के महानगर कोलकाता का यह परिवार इतना दकियानूसी? आज भी परिवार की मानमर्यादा के नाम पर पत्नी का, कन्या का ऐसा मानसिक शोषण? असल में पारिवारिक संस्कारों और परंपराओं का बरगद जब अपनी जड़ें फैला लेता है तो उसे उखाड़ फेंकना प्रायः असंभव हो जाता है। वही यहां भी हो रहा है। काउंसलिंग की तारीख नजदीक आती जा रही है। घर में तूफान आया हुआ है, पुलक सब को मनाने की कोशिश में लगी हुई है लेकिन वे टस से मस होने को तैयार नहीं हैं। लड़की को इंजीनियर बनाने के लिए होस्टल भेज कर पढ़ाना कोई तुक नहीं है। लड़की को इंजीनियर बना कर करना क्या है? नौकरी करानी है? साल 2 साल में शादी कर के अपना घर बसाएगी, दादाजी का तर्क है। बेटा, इतनी ऊंची पढ़ाई करना, लड़के वाले सपने देखना कोई बुद्धिमानी नहीं। अब देख, तेरी मां ने भी तो आई।आई एम। से एम।बी।ए। किया। क्या फायदा हुआ? एक सीट बरबाद हुई न? कोई लड़का आता, उस पर नौकरी करता तो सही इस्तेमाल होता उस सीट का। तू तो बी।एससी। कर के कालिज जाने का शौक पूरा कर ले, सिद्धांत ने बड़े प्यार से पुलक का सिर सहलाया। तरंग ने सब सुना। उन्हें लगा, जैसे आरे से चीर कर रख दिया सिद्धांत के तर्क ने। खुद चोर ही लुटे हुए से प्रश्न कर रहा था। विवाह के 22 साल बीत चुके हैं। आज तक कभी उन्होंने सिद्धांत की कोई बात काटी नहीं है। तर्कवितर्क नहीं किया है। आज भी चुप लगा गईं। सहसा यादों की डोर थामे वह 24 साल पहले के अतीत में पहुंच गईं। आई।आई एम। से तरंग के प्रवेश का कार्ड आने के बाद पापा परेशान थे। क्या करूं कल्पना, कुछ समझ नहीं पा रहा हूं। लड़की के रास्ते की रुकावट बनना नहीं चाहता और उस पर उसे चलाने का साधन जुटाने की राह नहीं दिख रही। शान से सिर ऊंचा हो रहा है और शर्म से डूब मरने को मन कर रहा है, पापा सचमुच परेशान थे। अरे, तो सोच क्या रहे हैं? भेजिए उसे। हां, भेजूं तो। पर होस्टल का खर्च उठाने की औकात कहां है हमारी? ओह, यह समस्या है? वह प्रबंध मैं ने कर लिया है। शकुंतला चाची की लड़की सुहासिनी कोलकाता में है। पिछले साल ही अभिराम का तबादला हुआ है। मेरी बात हो गई है सुहास से। लेकिन इतना बड़ा एहसानङ्घ बात एकदो दिन की नहीं पूरे 2 साल की है। हां, वह भी बात हो गई है मेरी। बड़ी मुश्किल से मानी। 1 हजार रुपया महीना हम किट्टू के नाम जमा करते रहेंगे। किट्टू? अरे, भई, उस की छोटी बेटी। बस, बाकी तरंग समझदार है। मौसी पर बोझ नहीं, सहारा ही बनेगी। बहुत बड़ा बोझ उतरा था पापा के सिर से, वरना वह तो पी।एफ। पर लोन लेने की सोच रहे थे। बेटी के उज्ज्वल भविष्य को अंधकार में बदलने की तो वह सोच ही नहीं सकते थे। एक वह पिता थे और एक यह सिद्धांत हैं। बेचारी पुलक आज्ञाकारिणी है, उन की तरह जिद्दी नहीं है। वह अपने पापा की आंखों में आंखें डाल कर कभी बहस नहीं करेगी। बस, मम्मी का आंचल पकड़ कर रो सकती है या घायल हिरणी की तरह कातर दृष्टि उन पर टिका सकती है। अचानक तरंग को लगा कि वह अपने और पुलक के पापा की तुलना कर रही है, तो दोनों की मम्मियों की क्यों नहीं? उस की अनपढ़ मम्मी ने उपाय निकाला था और वह स्वयं इतनी शिक्षित हो कर भी असहाय हैं, मूक हैं, क्यों? कहीं उन की अपनी कमजोरी ही तो बेटी की सजा नहीं बन रही। उन की बेजबानी ने बेटी को लाचार बना दिया है। कुछ निश्चय किया उन्होंने और रात में सिद्धांत से बात कर डाली। सिद्धांत, आप ने पुलक को मेरा उदाहरण दिया। पर जमाना अब बदल गया है। आज लड़कियां लड़कों की तरह अलगअलग क्षेत्रों में सक्रिय हैं और फिर जरूरी तो नहीं कि सब के विचार आप लोगों की ही तरह हों। समय के साथ विचारों में भी परिवर्तन आता है। हो सकता है उस की डिगरी मेरी तरह बरबाद न हो और डिगरी तो एक पूंजी है, जो मौका पड़ने पर सहारा बन सकती है। आप क्यों अपनी बेटी के पंख कतरने पर तुले हैं? जलती आंखों से देखा सिद्धांत ने, कि इस मुंह में जबान कैसे आ गई? फिर तुरंत मुसकरा पड़े। तीखे स्वर में बोले, आ गया आंधी का झोंका तुम पर भी। वुमेन इमैन्सिपेशन? बेटी है न? तो सुनो, तुम्हारे बाप ने तुम्हें इसलिए पढ़ा दिया, क्योंकि उन्हें अपनी हैसियत का पता था। पढ़लिख कर नौकरी करेगी, अफसर बनेगी। उन्हें पता था कि वह किसी ऊंचे घराने में बेटी ब्याहने की हैसियत नहीं रखते। पर मुझे पता है कि मेरी औकात है अपनी बेटी को ऐसे ऊंचे खानदान में देने की, जहां वह बिना दरदर की खाक छाने राज करेगी। यह तो तुम्हारी किस्मत ने जोर मारा और तुम मुझे पसंद आ गईं, वरना इतने नीचे गिर कर भला हम लड़की उठाते? अब इस विषय में कोई बात नहीं होगी। दिस चैप्टर इस क्लोज्ड। बारबार एक ही बात दोहराना मुझे बिलकुल पसंद नहीं, और वह करवट बदल कर सो गए। तरंग की वह रात आंखों में कटी।

तरंग ने सब सुना। उन्हें लगा, जैसे आरे से चीर कर रख दिया सिद्धांत के तर्क ने। खुद चोर ही लुटे हुए से प्रश्न कर रहा था। विवाह के 22 साल बीत चुके हैं। आज तक कभी उन्होंने सिद्धांत की कोई बात काटी नहीं है। तर्कवितर्क नहीं किया है। आज भी चुप लगा गईं। सहसा यादों की डोर थामे वह 24 साल पहले के अतीत में पहुंच गईं।

तीसरे दिन जिम से लौटने पर सिद्धांत बाहर टैक्सी खड़ी देख हैरान रह गए। पूछने ही वाले थे कि कमरे से तरंग को निकलते देखा। काले रंग की बालूचरी साड़ी में लिपटी उन की कोमल काया थोड़ी कठोर लग रही थी। हैरान होने की आज उन की बारी थी। कहां जा रही हो? सुनीता के यहां, लेकिन इतनी सुबह? तरंग अपनी बचपन की सहेली सुनीता के यहां कभीकभी चली जाती हैं। वह सीधी आगे बढ़ कर सिद्धांत से मुखातिब हुईं। नहीं, सुनीता के यहां नहीं। साढ़े 9 वाली फ्लाइट से दिल्ली जा रही हूं। किस लिए, यह आप समझ ही गए होंगे। वहां मैं रमण अरोड़ा के घर रुकूंगी। यह रहा उन का पता। उन्होंने सिद्धांत के हाथ में कार्ड पकड़ा दिया। तब तक पुलक हाथ में अटैची पकड़े अपने कमरे से बाहर आ चुकी थी। सिद्धांत तो इस कदर अकबका गए कि बोल ही बंद हो गए। मांजी बाहर ही खड़ी थीं, उन्होंने चुप्पी तोड़ी, लेकिन जा ही रही हो तो मौसी के घर रुक जातीं। गैरों के घर इस तरह नहीं मम्मीजी, मौसी के घर रुकने में परिवार की बदनामी होगी। अकेली जा रही हूं न बेटी के साथ। क्या बहाना बनाऊंगी? और फिर कौन गैर, कौन अपना सब के मुंह पर ताले लग गए। तरंग ने मांबाबूजी के पैर छुए। एक हाथ में पोर्टफोलियो और दूसरे से पुलक का हाथ पकड़ सीधे निकल गईं। मुड़ कर देखा तक नहीं। ■

विश्व स्वास्थ्य दिवस, 7 अप्रैल 2019 पर विशेष

विश्व स्वास्थ्य दिवस 2019 पूरे विश्व भर में 7 अप्रैल रविवार को मनाया जायेगा। सन 1948 में इसी दिन संयुक्त राष्ट्र संघ की एक अन्य सहयोगी और संबद्ध संस्था के रूप में दुनिया के 193 देशों ने मिल कर स्विट्जरलैंड के जेनेवा में विश्व स्वास्थ्य संगठन की नींव रखी थी। इसी संस्था द्वारा विश्व में मुख्यतः स्वास्थ्य मुद्दों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिये विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य दुनिया भर के लोगों के स्वास्थ्य के स्तर को ऊंचा उठाना है एवं उन्नत स्वास्थ्य की जीवनशैली निरूपित करना है। एक स्वस्थ विश्व बनाने के लक्ष्य के लिये इसने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। आज न केवल भारत बल्कि समूची दुनिया के सम्मुख स्वास्थ्य एक प्रमुख एवं बड़ी समस्या है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से पूर्ण स्वस्थ होना ही मानव-स्वास्थ्य की परिभाषा है। इस दिवस को मनाते हुए आध्यात्मिक चिकित्सा को बल दिया जाना चाहिए, क्योंकि यह बीमारियों से निजात दिलाने का एक कारगर उपाय है।

स्वस्थ जीवन की सार्थक तलाश जरूरी

देवेश शुक्ला

हर इंसान का स्वास्थ्य अच्छा हो और बीमार होने भी पर हर व्यक्ति को उन्नत इलाज की अच्छी सुविधा मिल सके, दुनियाभर में पोलियो, रक्ताल्पता, नेत्रहीनता, कुष्ठ, टी.बी., कैंसर, मलेरिया और एड्स जैसी भयानक बीमारियों की रोकथाम हो सके और बीमारियों के प्रति व्यक्ति एवं समाज को जागरूक बनाया जा सके और उनको उन्नत स्वस्थ वातावरण प्रदत्त कर स्वस्थ रहना सिखाया जा सके- यहीं विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाने का उद्देश्य है।

हर इंसान में तंदुरुस्त रहन-सहन की आदत को प्रोत्साहन देने और लोगों के जीवन के लिये अच्छे स्वास्थ्य का वातावरण निर्मित करने लिये विश्व स्वास्थ्य दिवस प्रयास करता है। बीमारीमुक्त समाज व्यवस्था को स्थापित करने के ध्येय से इस दिवस की उपयोगिता एवं प्रासंगिकता आज अधिक है। क्योंकि जिसके पास स्वास्थ्य है उसके पास आशा है, और जिसके पास आशा है, उसके पास जिंदगी में सब कुछ है। सुख है, शांति है और प्रसन्नता है। स्वास्थ्य वह बेशकीमती दौलत है जिसे दुनिया की सारी दौलत मिलकर भी नहीं खरीद सकती। अमीर होने के लिए अपने स्वास्थ्य को दांव पर लगाना आधुनिक जीवन की एक बड़ी विषमता एवं विसंगति है, क्योंकि यह सत्य है कि स्वास्थ्य दौलतों की भी दौलत है।

असन्तुलन एवं अस्तव्यस्तता ने न केवल स्वास्थ्य को बल्कि जीवन को भी जटिल बना दिया है। बढ़ती प्रतियोगिता, आगे बढ़ने की होड़ और अधिक से अधिक धन कमाने की इच्छा ने इंसान के जीवन से सुख, चैन व शांति को दूर कर दिया है। सब कुछ पा लेने की इस दौड़ में इंसान सबसे ज्यादा अनदेखा खुद को कर रहा है और खुद के स्वास्थ्य को कर रहा है। बेहतर कल के सपनों को पूरा करने के चक्कर में अपने आज को नजरअंदाज कर रहा है। वह भूल रहा है कि बीता हुआ समय लौटकर नहीं आता, इसलिए कुछ समय अपने लिए, अपने शरीर, अपने स्वास्थ्य के लिये, अपने शौकों और उन कामों के लिए, जो आपको खुशियां देते हैं, रखना भी बहुत जरूरी है।

आज की व्यस्तता और तनावग्रस्त जिंदगी में मनुष्य अपने स्वास्थ्य पर ध्यान नहीं दे पा रहा है, यही कारण है कि उसकी सुख की तलाश अधूरी है। मनुष्य सुख खोजता है, देखता है पर जीता नहीं क्योंकि उसका मन और तन स्वस्थ नहीं है। चिन्ता, भय, आशंका, उदासी, क्लेश आदि ऐसे निषेधात्मक भाव हैं, जो हर पल इंसान को उसके अस्तित्व एवं अस्मिता दोनों के प्रति लापरवाह बनाते हैं। इंसान का अच्छा या बुरा होना भाग्य, परिस्थिति या कोई दूसरे व्यक्ति के हाथ में नहीं होता, यह सब घटित होता है इंसान के मन और तन के संतुलन या असंतुलन पर। स्वास्थ्य की कीमत तब तक नहीं समझी जा सकती जब तक बीमारी नहीं घेर लेती। कोई दवाइयां और चिकित्सक तो खरीद सकता है पर स्वास्थ्य कभी नहीं। इसलिये स्वस्थ जीवन के लिये व्यक्ति को स्वयं ही जागरूक एवं सर्तक होना होता है।

एक सुंदर और अच्छे जीवन के लिए जरूरी है- अच्छी सेहत। और अच्छी सेहत के लिए जरूरी है- समय पर सोना और सुबह जल्दी जागना, लेकिन आज के समय में अधिकांश युवाओं के सोने और जागने का समय निश्चित ही नहीं है। रात को देर तक काम करने की वजह से सुबह देर तक सोना आज आम बात हो गई है। आठ घंटे की नींद भी कम ही

विचारों का स्वास्थ्य पर बहुत गहरा प्रभाव होता है, अतः स्वस्थ जीवन के लिए सकारात्मक विचारों का विकास जरूरी है। आज हर आदमी सुख की खोज में खड़ा है और उस थके हारे इंसान को प्रतिबोध देते हुए खलील जिब्रान को पढ़ना अच्छा लगता है जो लिखते हैं कि मैं भी कहता हूं कि जीवन सचमुच! अंधकारमय है, यदि आकांक्षा न हो। सारी आकांक्षाएं अंधी है यदि ज्ञान न हो। सारा ज्ञान व्यर्थ है यदि कर्म का ज्ञान न हो। इसलिये स्वयं पर भरोसा जरूरी है, मनुष्य जीवन में तभी स्वस्थ रह सकता है, तभी ऊंचा उठता है जब उसे स्वयं पर भरोसा हो जाए कि मैं अनंत शक्ति सम्पन्न हूं। ऊर्जा का केन्द्र हूं।

लोगों को नसीब हो रही है। पूरी नींद न लेना कई बीमारियों की वजह बन जाती है। आज लगभग ऑफिसों में कम्प्यूटर पर ही सब काम होता है, इसलिए आंखों में दर्द, जलन, सिरदर्द व माइग्रेन की समस्या तेजी से बढ़ती जा रही हैं।

तन और मन दोनों का गहरा संबंध है। दोनों की स्वस्थता परस्पर सापेक्ष है। शारीरिक स्थितियों और घटनाओं से मन प्रभावित होता है, मानसिक स्थितियों और घटनाओं से तन प्रभावित होता है। ह्यस्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निवास होता है।ह्ल यह अधूरा सत्य है। इसके साथ हमें यह भी जोड़ना चाहिए, ह्यस्वस्थ मन से स्वस्थ शरीर का निर्माण होता है।ह्ल

रोग से भी अधिक हम रोग की चिंता से रोगी और दुर्बल बनते हैं। जब भी शरीर पर रोग का आक्रमण हो, हमें विचारों की स्वस्थता और संतुलन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। आज ह्यफेथ-हीलिंगह्ल की चर्चा ज्यादा है, जिसे आस्था और भावना द्वारा चिकित्सा का ही एक रूप कह सकते हैं। भौतिक चिकित्सा का उपयोग करते हुए भी हमें इस आध्यात्मिक चिकित्सा का प्रयोग करना चाहिए। आज का जीवन उतार-चढ़ाव से भरा है, कभी लोग छूट जाते हैं तो कभी वस्तुएं। खुद को संभाले रखना आसान नहीं हो पाता। समझ नहीं आता, करें तो क्या? सीक्रेट लाइफ ऑफ वाटर में मैसे ईमोटो लिखते हैं, अगर आप उदास, कमजोर, निराश, संदेह या संकोच से घिरा महसूस कर रहे हैं तो खुद के पास लौटें, स्वयं से स्वयं का साक्षात्कार करें, देखें कि वर्तमान में आप कहां हैं, क्या हैं और क्यों हैं। आप खुद को पा जाएंगे, आत्म-साक्षात्कार की इस स्थिति से आप बिल्कुल कमल के फूल की तरह खिल जायेंगे, जो कीचड़ में भी पूरी खूबसूरती के साथ खिल उठता है। इस तरह तमाम बाधाओं एवं परेशानियों के बीच भी आप प्रसन्नता को जीवन में उतरते हुए देख सकेंगे। प्रसन्नता विश्व का श्रेष्ठ रसायन है। जो इसका निरंतर सेवन करता है, उसमें रोग प्रतिरोधक शक्ति का स्वतः विकास होता है।

स्वस्थ शब्द को अंग्रेजी के हेल्दी शब्द का पर्यायवाची माना गया है। पर स्वस्थ में जो मर्म छुपा है, वह हेल्दी शब्द में नहीं है। जो मनुष्य अपनी शुद्ध प्रकृति में स्थिर होता है, वही स्वस्थ होता है। इस परिभाषा के अनुसार स्वस्थ वह है जो शरीर से ही नहीं, विचारों से भी स्वस्थ है। जिसके त्रिदोष-वात, पित्त, कफ, अग्नि (पाचनशक्ति), रक्त मज्जा, मांस आदि धातुएं तथा मल-विसर्जन आदि क्रियाएं सम होती हैं, जिसकी आत्मा, इन्द्रियां व मन प्रसन्न हैं, वही स्वस्थ होता है।

विचारों का स्वास्थ्य पर बहुत गहरा प्रभाव होता है, अतः स्वस्थ जीवन के लिए सकारात्मक विचारों का विकास जरूरी है। आज हर आदमी सुख की खोज में खड़ा है और उस थके हारे इंसान को प्रतिबोध देते हुए खलील जिब्रान को पढ़ना अच्छा लगता है जो लिखते हैं कि मैं भी कहता हूं कि जीवन सचमुच! अंधकारमय है, यदि आकांक्षा न हो। सारी आकांक्षाएं अंधी है यदि ज्ञान न हो। सारा ज्ञान व्यर्थ है यदि कर्म का ज्ञान न हो।ह्ल इसलिये स्वयं पर भरोसा जरूरी है, मनुष्य जीवन में तभी स्वस्थ रह सकता है, तभी ऊंचा उठता है जब उसे स्वयं पर भरोसा हो जाए कि मैं अनंत शक्ति सम्पन्न हूं। ऊर्जा का केन्द्र हूं। अन्यथा जीवन का आधा दुःख तो हम इसलिये उठाते फिरते हैं कि हम समझ ही नहीं पाते कि सच में हम क्या है? ■

पुस्तक...

पुस्तक है वह वृक्ष मधुर फल जो देता है।
जीवन पथ के श्रान्त वटोही को आश्रय देता है।।

पुस्तक ज्ञान सरोवर है विवेक की जननी।
जीवन का आधार सुखी मानव मन करनी।।

प्राण वायु संचालक हृदय हेतु हितकारी।
शान्ति प्रदाता कष्ट निवारक भय मंत्रक सुखकारी।।

पुस्तक दीपक सद्श जगत को ज्योतित करती।
दूर करे अज्ञान की वृद्धि करतीं।।

कलि मल कीट पतंगों से है मुक्ति प्रदाता।
तिमिर विनाशक जीवन रक्षक सब सुखदाता।।

है प्रकाश की वाहक शत्रु अन्धकार की।
चैतन्यों की मित्र मातु साहित्य कार की।।

पुस्तक है वह उद्धि निरन्तर मोती देता।
मणि माणक रत्नों से जीवन गृह भर देता।।

जितना चाहो लो पर उसमें कमी न आती।
मातु सरस्वती स्वयं उसे पूरा कर जाती।।

जीवन का आधार जिस तरह रत्नाकर है।
मानव का आधार ज्ञान की यह गागर है।।

पुस्तक है वह पुष्प सुगन्धि वितरित करता।
सकल वायुमण्डल में नवजीवन भर देता।।

जिसके पंखुड़ी पृष्ठ युगों तक मन हरषाते।
देकर मोहक गन्ध हृदय को जो सर साते।।

मन को निर्मल करे विश्व वन्धुत्व सिखाती।
करुणा कामलता पवित्रता पाठ पढ़ाती।।

पुस्तक एक झरोखा शीतल वायु प्रदायक।
सुप्त विचारो की पुस्तक है गतिमय कारक।।

मन आल्हादित करे मित्र की भांति सदा ही।
गूढ़ तत्व उद्लेक मृदु मय ज्ञान प्रदा ही।।

भाव विचारों की वाहक यक सृजन तत्व है।
कुटिल क्रूर परिवर्तन हित मधुर सत्व है।।

पुस्तक एक विमान विश्व का भ्रमण कराती।
सूर्य चंद्र आकाश ग्रहों का पाठ पढ़ाती।।

अन्तरिक्ष पाताल सुतल या भूमंडल है।
ज्योतिष या विज्ञान या फिर तारा मण्डल।।

प्रकृति का हर रूप जहां जिस की दस्तक है।
ज्ञान मंजूषा की कुंजी केवल पुस्तक है।।

पुस्तक वह मृदुफल है जिसमें शहद भरा है।
पुस्तक अमृत तत्व मोहिनी रूप धरा है।।

पुस्तक ही गन्तव्य और वह ही वाहक है।
सकल विहित उद्देश्यों की वह ही साधक।।

पुस्तक पूजित सदा से ज्ञान वृद्धि भंडार।
पुस्तक ही से जगत में मिलते हैं फल चार।।

गुलराज गोपाल खण्डेलवाल, एडवोकेट एवं पूर्व अध्यक्ष
नगर सुधार न्यास, भरतपुर (राज.)